योगविद्या

वर्ष 12 अंक 2
फरवरी 2023

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2023

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :

www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्प : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 (कवर पृष्ठों सहित)

कवर एवं अन्दर के प्लेट:
स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

सत्यम् के प्रति उनके गुरु, स्वामी शिवानन्द जी के उद्गार

इतनी कम उम्र में ऐसा प्रखर वैराग्य दुर्लभ है। स्वामी सत्यानन्द नचिकेता तत्त्व से ओत-प्रोत हैं। तथापि वे जो भी काम हाथ में लेते हैं, उसे निपुणता और कुशलता से पूरा करके ही छोड़ते हैं। चार-चार लोगों का काम वे अकेले ही कर जाते हैं, पर कभी शिकायत नहीं करते। उनकी विभूति सर्वांगीण है, फिर भी वे विनम्र और सीधे-सादे हैं। वे एक आदर्श साधक और निष्काम सेवक हैं, दिव्य जीवन संघ के साक्षात् आधारस्तम्भ हैं। भगवान उन्हें सुख, शांति, समृद्धि, आरोग्य और आनन्द प्रदान करें।

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 12 अंक 2 फरवरी 2023

(प्रकाशन का 61 वाँ वर्ष)

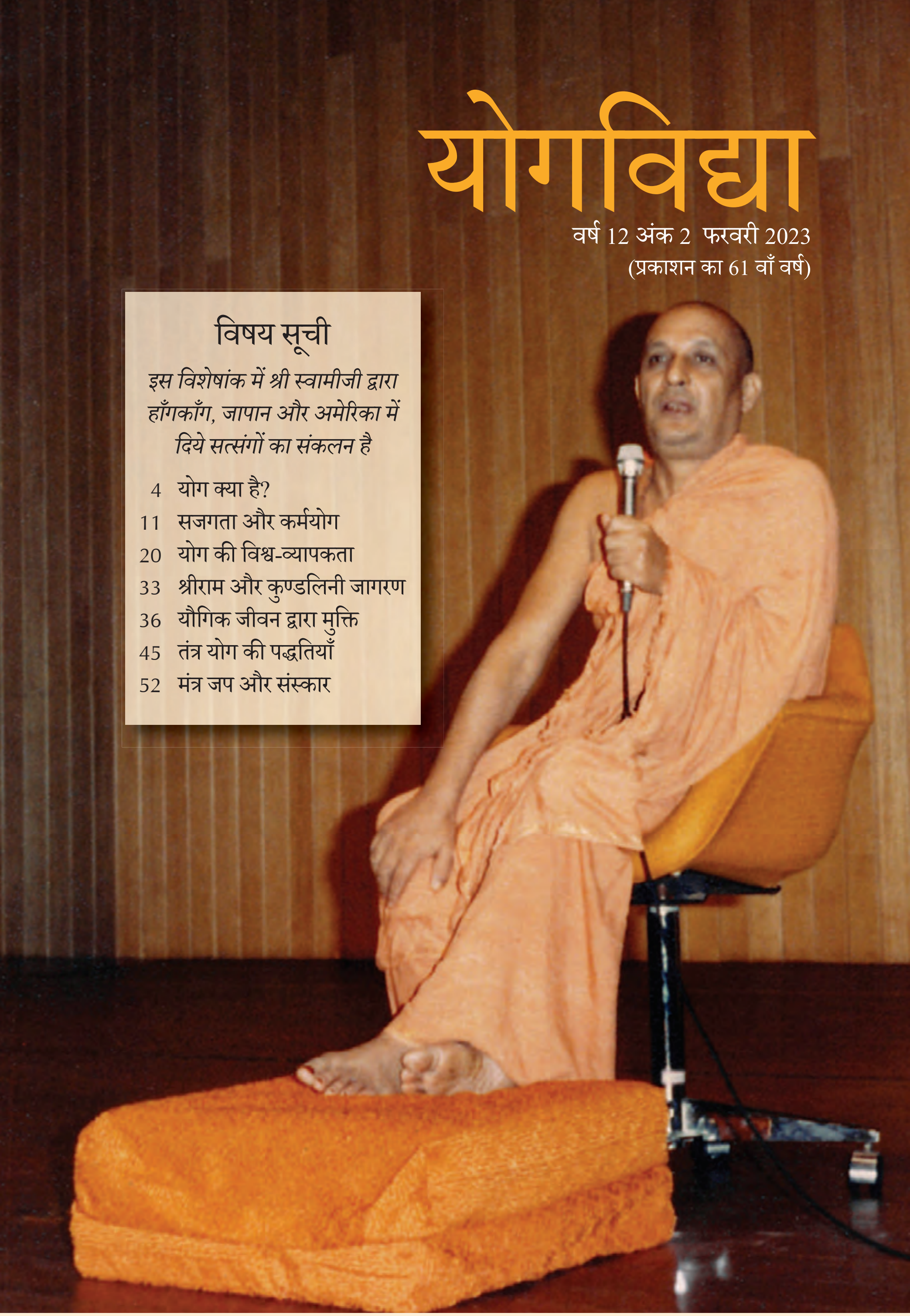

विषय सूची

इस विशेषांक में श्री स्वामीजी द्वारा हाँगकाँग, जापान और अमेरिका में दिये सत्संगों का संकलन है

4 योग क्या है?

11 सजगता और कर्मयोग

20 योग की विश्व-व्यापकता

33 श्रीराम और कुण्डलिनी जागरण

36 यौगिक जीवन द्वारा मुक्ति

45 तंत्र योग की पद्धतियाँ

52 मंत्र जप और संस्कार

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

योग क्या है?

आध्यात्मिक साधकों! आज योग पर प्रारंभ से ही चर्चा करेंगे ताकि इस जीवन रक्षक विज्ञान के विषय में कोई भ्रांति न रहे। योग शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख हमारे प्राचीनतम ग्रन्थ, ऋग्वेद में मिलता है कि प्रजापति ब्रह्मा ने योग का सर्वप्रथम उपदेश हिरण्यगर्भ को दिया था। हिन्दू धर्म के अनुसार ब्रह्मा, व्यक्ति में सृजनात्मकता तथा ब्रह्माण्ड में सृजन शक्ति के प्रतीक हैं। प्रत्येक व्यक्ति में वह सृजन शक्ति विद्यमान है। इसी ब्रह्माण्डीय सृजनकर्ता को वेदों में ब्रह्मा नाम दिया गया है जिसने लोगों को योग का प्रथम उपदेश दिया है।

हमारे ऋषि-मुनियों को ध्यान के उच्च अभ्यासों में प्रकाश तथा विस्तृत ब्रह्माण्डीय चेतना के अनुभव हुए थे। इन्हीं अनुभवों ने उन्हें योग विषयक खोजों में अग्रसर होने की प्रेरणा दी। ऋग्वेद काल से उन्होंने मानव मस्तिष्क की रहस्यात्मक, गूढ़ तथा विस्मयकारी शक्ति की अभिव्यक्ति तथा चेतन, अचेतन एवं पराचेतन स्तर पर उनके प्राकट्य पर शोध किए। तत्पश्चात् उपनिषदों ने योग की व्याख्या की। अन्ततः महर्षि पतंजलि ने अपने योगसूत्रों में इस योग विज्ञान का सार प्रस्तुत किया। आज ये योगसूत्र विभिन्न भाषाओं में अपने भाष्यों सहित उपलब्ध हैं। योगसूत्रों के प्रारम्भ में महर्षि पतंजलि योग को पारिभाषित करते हुए कहते हैं कि योग चित्त की वृत्तियों का निरोध तथा पूर्ण नियंत्रण प्राप्त करने की विधि है। महर्षि पतंजलि का अनुसरण करते हुए हम कह सकते हैं कि 'योग वह पद्धति है जिसके द्वारा हम चेतना की विभिन्न अवस्थाओं तथा वृत्तियों का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त कर सकते हैं।'

हर मनुष्य में विद्यमान व्यक्तिगत चेतना निद्रा और स्वप्न जैसी अवस्थाओं के समय भी कार्यरत रहती है, जहाँ पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है। इसलिए मनुष्य की चेतना के विभिन्न आयामों में निहित ऊर्जा को पूर्णतः समझना तथा अनुभव करना सम्भव नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक मनुष्य में असीम शक्ति, ज्ञान, समझ तथा अनुभव का आगार उसके अस्तित्व के एक अभिन्न अंग के रूप में विद्यमान है। थोड़ा विचार करें कि जब मनुष्य ने मात्र चेतन स्तर की प्रतिभाओं से ही इतनी सारी आश्चर्यजनक खोजें तथा आविष्कार किए हैं, तब फिर अपनी चेतना के अवचेतन तथा अचेतन स्तर की प्रतिभाओं के प्रयोग से वह और कितने तरह के आश्चर्यजनक कार्य सम्पादित कर सकता है!

जब हम यह कहते हैं कि योग वह पद्धति है जो चेतना के विभिन्न स्तरों पर पूर्ण नियंत्रण प्रदान करती है तो हमारा तात्पर्य यह है कि योग हमें वह क्षमता प्रदान करता है जिसके द्वारा हम चेतना के विभिन्न आयामों में प्रविष्ट हों, देखें तथा जानें कि वहाँ क्या हो रहा है, कितना और क्या छिपा हुआ है। रात्रि में आप शयन करते हैं, अचेतन रहते हैं, किन्तु इस अचेतन अवस्था में भी आप अपनी चेतना को विकसित करके उस अचेतन अवस्था के द्रष्टा बन सकें तो आपको अपने विषय में बहुत जानकारी मिलेगी जिससे आप परिचित नहीं हैं। रात्रि में जब आप स्वप्न देखते हैं और आपको अपनी चेतना द्वारा यह ज्ञान रहे कि आप स्वप्न देख रहे हैं तो संभवतः जीवन विषयक जितनी जानकारी आपको अभी प्राप्त है, उससे कहीं अधिक जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

जहाँ तक स्वप्न का प्रश्न है, वहाँ तो हम विवश हैं। हम स्वप्न इसलिए नहीं देखते कि हम उन्हें देखना चाहते हैं, हमें उन्हें देखना पड़ता है। क्या आपको मालूम है कि रात को गहरी नींद में पहुँचने के बाद और सबेरे बिस्तर से उठने के पूर्व आप कहाँ रहते हैं? उस समय हम ऐसे कमरे में रहते हैं जो शक्ति तथा ज्ञान से परिपूर्ण है, परन्तु यह हमारी असमर्थता है कि हम उस स्थान की सभी जानकारियों से वंचित रहते हैं। हम प्रतिदिन उसमें प्रवेश करते हैं और उसके विषय में बिना कोई जानकारी लिए लौट आते हैं। यह कितनी बड़ी विचित्रता है कि हम सब कुछ देख रहे हैं, परंतु कुछ भी कर सकने में असमर्थ है अर्थात् हम अचेतनता तथा सम्मोहन की अवस्था में रहते हैं।

क्या कोई पद्धति है कि उस तिमिराच्छन्न ज्ञान कक्ष में प्रविष्ट होने के बाद भी हम पूरी तरह चैतन्य तथा जागृत रहें? अपनी आँखें खोलकर यह देखें तथा जानें कि वहाँ क्या है तथा क्या हो रहा है? हाँ, यह सम्भव है जब आप चेतना के विभिन्न स्तरों तथा वृत्तियों पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त कर सकें। जब आपकी चेतना का एक अंश निद्रा में जाए तो दूसरा अंश जागृत तथा चैतन्य रहकर उस अंश का अध्ययन, अवलोकन कर सके। इस परिप्रेक्ष्य में योग को दूसरी तरह से परिभाषित करते हुए हम कह सकते हैं कि 'योग वह पद्धति है जिसके द्वारा हम अपनी व्यक्तिगत चेतना को अचेतन अवस्था में भी बनाए रख सकते हैं।' इस चेतना को ध्यान के नियमित अभ्यास द्वारा विकसित किया जा सकता है। इस अभ्यास में एक विशेष प्रतीक, मन्त्र अथवा चेतना के बिन्दु का अवलम्बन लेकर चेतन से अवचेतन तथा अचेतन मन में प्रवेश किया जाता है। उसके बाद एक झटके के साथ पराचेतन अवस्था में छलाँग लगाना संभव हो जाता है।

कभी-कभी योग की परिभाषा यह भी दी जाती है कि 'यह ऐसी पद्धति है जो हमारे अचेतन तथा अवचेतन मन को विकसित करती है', परन्तु यह सही परिभाषा नहीं हो सकती क्योंकि अवचेतन तथा चेतन मन का विकास तो आपके व्यक्तित्व के क्रम विकास की स्वाभाविक परिणति है। इन स्तरों का विकास तो योग के अलावा अन्य साधनों द्वारा भी सम्भव है। आप प्रतिदिन सोते तथा स्वप्न देखते हैं। यदि आप योगाभ्यास न भी करें तो प्रतिदिन निद्रा अवस्था में स्वप्न देख सकते हैं। इसलिए योग अचेतन तथा अवचेतन स्तरों के विकास का साधन नहीं, बल्कि उनके अवलोकन का माध्यम हो सकता है।

योग का प्रयोग जब अवचेतन या अचेतन के विकास के लिए किया जाता है तो वह सम्मोहन हो जाता है, किन्तु जब योग का लक्ष्य अवचेतन या अचेतन स्तर के अवलोकन तथा उसके द्रष्टा बनने के लिए किया जाता है, तब वह वास्तव में योग होता है। यह बात भी सही है कि प्रारम्भिक अवस्था में योग पूर्ण विश्राम की स्थिति में ले जाने के लिए सम्मोहन प्रक्रिया का उपयोग करता है। जब आपको अपनी चेतना के संसार की ओर हो रहे स्वाभाविक प्रवाह को बदलना होता है तथा अपनी इन्द्रियों का निग्रह करना होता है, तब उस समय आपको विश्राम की एक प्रक्रिया से गुजरना होता है। विश्रान्ति लाने की इस प्रकिया में कुछ अंशों में सम्मोहन के उपायों का सहारा लेना पड़ता है, जो अपने में निरापद है।

जब आपकी चेतना अन्तर्मुखी हो जाती है और आप अवचेतन में जाने के लिए प्रस्तुत होते हैं तो उसे एक अवलम्ब, नाम या रूप की आवश्यकता पड़ती है ताकि अवचेतन में प्रविष्ट होने के बाद भी आप अपनी सजगता को बनाए रख सकें। अपनी चेतना को स्थिर रखने के लिए एक आधार की आवश्यकता होती है। जब आप अपनी चेतना के विभिन्न स्तरों से होते हुए अन्तरतम में प्रवेश करके भी अपनी सजगता को अक्षुण्ण बनाए रख सकें तथा उन गुह्य आयामों में भी आपकी सजगता न तो लुप्त हो, न ही विक्षिप्त हो, बल्कि तैलधारावत् बनी रहे, तब उसे वास्तविक योग कहा जाएगा। परन्तु यदि चेतना के विभिन्न आयामों में यात्रा के समय आपकी सजगता में कमी आये अथवा पूर्णरूपेण विलुप्त हो जाये तो मैं कहूँगा कि आप सही तरीके से योगाभ्यास नहीं कर रहे हैं। जब हम गलत तरीके से ध्यान का अभ्यास करते हुए अवचेतन में पहुँचते हैं तो कुछ भी नहीं समझ पाते। उस अवस्था में बुद्धि तथा अनुभव के बीच कोई सामंजस्य नहीं होता। यद्यपि अनुभव तो होता है तथापि हम उसे न तो समझ पाते हैं और न उसके प्रति जागरूक रहते हैं।

अब मैं योग की एक तीसरी परिभाषा दूँगा – 'योग अवचेतन तथा अचेतन अवस्थाओं में डिहिप्नोटाइज़ेशन अर्थात् सम्मोहन को हटाने की एक प्रक्रिया है।' इसलिए योग एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें ज्ञान, सजगता, समझ, अवलोकन तथा अपने अनुभवों की पूर्ण अनुभूति होती है। प्रथम परिभाषा के अनुसार 'योग वह विशेष कला है जिसके माध्यम से चेतना के विभिन्न आयामों पर पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त होता है।' दूसरी परिभाषा के अनुसार, 'योग वह कला है जिसके द्वारा हम चेतना के विभिन्न अनुभवों के द्रष्टा तथा साक्षी बनते हैं।' तीसरी परिभाषा के अनुसार 'योग चेतना की सभी अवस्थाओं के असम्मोहन की एक प्रक्रिया है।'

अब मैं योग के शाब्दिक अर्थ पर आता हूँ। यह संस्कृत भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ होता है जोड़ना या मिलाना। जब दो व्यक्ति एक दूसरे से अलग होते हैं तो उसे वियोग कहते हैं। इसके विपरीत जब दो वस्तुएँ या व्यक्ति निकट आते हैं तो उसे संयोग अथवा योग कहा जाता है। सवाल यह है कि कौन किससे मिलता है, क्योंकि जब हम योगाभ्यास करते हैं तो योग नहीं, वियोग होता है। जब हम ध्यान के लिए बैठते हैं तब हम बाह्य चेतना को वस्तु जगत् के अनुभवों से अलग करते हैं। हम देखना, सुनना, सोचना, समझना, सब बन्द कर देते हैं। तो इसे योग कहेंगे अथवा वियोग?

योग सम्बन्धी विभिन्न ग्रन्थों में कहा गया है कि जब व्यक्तिगत चेतना बाह्य अनुभवों के समूह से मुक्त हो जाती है तो उसका संयोग ब्रह्माण्डीय चेतना से होता है। वेदांत दर्शन के अनुसार वह चेतना जिसके द्वारा हम एक-दूसरे को देखते, सुनते या समझते हैं जिसके द्वारा हम भूत तथा वर्तमान का अनुभव करते हैं, उस अखिल विश्वव्यापी ब्रह्माण्डीय चेतना का एक अंश मात्र है। अतएव वेदान्त दर्शन में इन दो चेतनाओं के अन्तर को स्पष्ट करने के लिए जिन दो शब्दों का प्रयोग होता है, वे हैं जीव या व्यक्तिगत व्यष्टि चेतना तथा आत्मा या ब्रह्माण्डीय, समष्टि चेतना।

चेतना जब मन, बुद्धि, इन्द्रियों अथवा शरीर के माध्यम से सक्रिय होती है तो उसे व्यष्टि चेतना कहा जाता है। जब उसे सभी ओर से खींचकर अवलम्ब विहीन कर बिना किसी माध्यम के सक्रिय किया जाता है तो एक समष्टि अर्थात् अखिल ब्रह्माण्डीय चेतना की अवस्था प्राप्त हो जाती है। जब चेतना इन्द्रियों के माध्यम से कार्यरत होती है तो उसे इन्द्रियगत चेतना कहा जाता है। जब वह शरीर के माध्यम से कार्यरत होती है तो शारीरिक चेतना कहलाती है। इसी तरह बुद्धि के माध्यम से कार्यरत चेतना को बौद्धिक चेतना तथा मन के माध्यम से काम करने वाली चेतना को मानसिक चेतना कहते हैं। इसी प्रकार अवचेतन स्तर पर चेतना क्षीण अवस्था में तथा अचेतन स्तर पर निराकार

स्वरूप में कार्यरत रहती है। परन्तु जब वह बिना माध्यम अथवा आवरण के अपने स्वाभाविक स्वरूप में कार्यरत होती है तो उसे समष्टि या ब्रह्माण्डीय या दिव्य चेतना के नाम से जाना जाता है।

ज्ञान, चेतना का एक स्वरूप या वृत्ति है। इसी प्रकार मिथ्या ज्ञान या ज्ञान का अभाव भी चेतना का एक स्वरूप है। ये चेतना के निम्न स्वरूप हैं जिनका हम प्रतिदिन अनुभव करते हैं। व्यावहारिक जगत् में हम इसी अवस्था में रहते हैं तथा इसे व्यष्टि चेतना कहते हैं। आप मेरा प्रवचन सुन रहे हैं, इस समय आपकी चेतना श्रवणेन्द्रिय के माध्यम से सक्रिय है। मैं आपकी ओर तथा आप मेरी ओर देख रहे हैं। इस समय हमारी चेतना दर्शनेन्द्रिय के माध्यम से सक्रिय है। मैं अपने प्रवचन के बारे में विचार कर रहा हूँ, तो मेरी चेतना बुद्धि के माध्यम से सक्रिय है। इस प्रकार शुद्ध, नामरहित तथा निराकार चेतना के विभिन्न नाम तथा साकार स्वरूप हैं।

सुख और दुःख का अनुभव कौन करता है? कौन विषय-वस्तुओं की समझ एवं ज्ञान रखता है तथा कौन गलतियाँ करता है? यह शुद्ध व्यष्टि चेतना की ही विभिन्न माध्यमों के द्वारा अभिव्यक्ति तथा अनुभूति है। यह चेतना उस निराकार प्रकाश के समान है जिसके सामने दर्शन, श्रवण, समझ और अनुभव की फिल्म निकल रही है। यह जीवन उस चेतना की अभिव्यक्ति मात्र है जो विभिन्न माध्यमों से छनकर हमारे अनुभव की परिधि में आ रही है। यदि आप इन माध्यमों तथा पर्दों को हटा दें, तो न जीवन, न अनुभव, दर्शन या समझ ही रह जायेगा। मात्र एक अनुभव रह जायेगा जिसके विषय में आपको शीघ्र ही बताऊँगा। इसके अतिरिक्त यह चेतना आपकी इन्द्रिय अनुभूतियों के समाप्त हो जाने पर भी मरती नहीं है। इस चेतना का अस्तित्व समाप्त नहीं होता। इस चेतना का अस्तित्व किसी माध्यम के बिना भी अनवरत बना रहता है। दूसरे शब्दों में यह चेतना सदैव अस्तित्व में थी, है, और रहेगी।

यही योग का अर्थ है। योगी निश्चित रूप से इस बात को जानते थे कि शारीरिक मृत्यु के बाद भी चेतना का अस्तित्व रहता है। वे जानते थे कि प्रत्येक जीव में एक ऐसा तत्त्व विद्यमान है जो बिना किसी माध्यम के भी अस्तित्त्व में रहता है। उन्होंने विभिन्न साधनाओं द्वारा स्वेच्छा से चेतना की उस अवस्था में पहुँचने का प्रयास किया। अतः योग की एक चौथी परिभाषा यह हो सकती है कि 'योग वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हमारी चेतना ज्ञान के प्रत्येक माध्यम से मुक्त हो जाती है।' दूसरे शब्दों में योग वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हमारी

चेतना, बिना किसी माध्यम या सीमा के, पूर्ण ज्ञान और अनुभव के साथ कार्य कर सके। यही पराचेतन अथवा समाधि की अवस्था है।

योगशास्त्र कहता है कि समाधिस्थ योगी बिना किसी माध्यम के देख, सुन, सोच-समझ अथवा अनुभव कर सकता है। वह बाहर से ज्ञान नहीं प्राप्त करता, क्योंकि ज्ञान उसकी चेतना का स्वभाव है। वह बाह्य जगत् से अनुभव ग्रहण नहीं करता, क्योंकि अनुभव उसका स्वभाव है। ब्रह्माण्डीय चेतना किसी देश, काल या वस्तु से प्रभावित नहीं होती, क्योंकि वह असीम है तथा समांगी रूप से हम सभी में विद्यमान है।

संक्षेप में योग अपने ही मन के साथ संघर्ष करने की एक कला, एक पद्धति है जिससे आप अपने मन की सीमाओं का अतिक्रमण कर उसे मुक्त करते हैं। मन की इस मुक्त अवस्था में आप अधिक ज्ञान, प्रकाश, शांति, स्थिरता, समझ, विवेक-बुद्धि तथा अपरिमित आनन्द का अनुभव प्राप्त करते हैं।

उस मनुष्य के लिए जो इस संसार में अनवरत संघर्ष, तनाव, दबाव, असंतोष, चिंता, परेशानी और निराशा के वातावरण में जी रहा है, योग सुख, शांति एवं मानसिक संतुलन का संदेश लाता है। उसके लिए जो व्यापार, राजनीति तथा सांसारिक क्रिया-कलापों में उलझा है, योग पूर्ण विश्रान्ति तथा मानसिक शक्ति प्रदाता है। उसके लिए भी जो मानसिक क्षमताओं के अन्वेषण और विकास में व्यस्त है, योग आत्म-नियन्त्रण, आत्मानुशासन तथा सर्वोच्च उपलब्धि का मार्ग प्रशस्त करता है। उसके लिए जो ईश्वर अथवा किसी धर्म के प्रति समर्पित है, किन्तु प्रार्थना में जिसका मन एकाग्र नहीं होता, योग एकाग्रता, सफलता एवं निष्ठा की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। जो समाधि अथवा पराचेतन अवस्था में जाना चाहता है, मेरी निश्चित राय है उसके लिए योग के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग हो ही नहीं सकता। इस थोड़ी-सी समयावधि में यह सब बताना बड़ा मुश्किल काम है। तीस लाख लोगों के लिए योग की तीस लाख परिभाषाएँ हो सकती हैं। अतएव योग की अंतिम तथा सर्वमान्य परिभाषा यह हो सकती है कि 'योग चेतना का विज्ञान है, व्यक्तित्व का विज्ञान है तथा सृजनात्मकता का विज्ञान है।' इसलिए आइये! योग आप सबको आमंत्रित करता है कि अधिक-से-अधिक जानिये, उपलब्धि प्राप्त कीजिये, सीखिये तथा विश्व को दीजिये।

– 5 मई 1968, मेंडरिन होटल, हाँगकाँग

सजगता और कर्मयोग

सजगता शब्द से मेरा तात्पर्य है स्वयं के प्रति जाग्रत होना। ध्यान तथा एकाग्रता के अभ्यासों के माध्यम से आप आत्मा की अन्तरतम गहराइयों की यात्रा करते हुए आत्म-साक्षात्कार के लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं और यही मानव जीवन का अन्तिम उद्देश्य है। यदि आप व्यावहारिक जीवन एवं कर्म साधना में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तो भी सजगता आपको लक्ष्य तक पहुँचाएगी।

आत्म-साक्षात्कार तथा सजगता जैसे शब्दों का वास्तविक अर्थ क्या है? सजगता का तात्पर्य यह है कि हम सचेत हैं, बाह्य जगत् की गतिविधियों के प्रति हम सचेत रहते हैं, हम आवाजें सुनते हैं, हमारी इन्द्रियाँ जानने और समझने में सक्षम होती हैं। निद्रा अवस्था में इस सजगता का सर्वथा अभाव रहता है। यदि आप अपनी मानसिक शक्तियों को समयानुसार एकाग्र करने का प्रयास करें तो स्वप्न तथा विभिन्न दृश्यों की एक स्मृति मात्र शेष रह सकती है। इसके अतिरिक्त एक और तरह की सजगता होती है जिसे आत्म-बोध कहते हैं, अर्थात् अपने आन्तरिक अस्तित्व तथा व्यक्तित्व की सजगता। आपको अपने शरीर, विचार, स्वप्न और कल्पना का बोध रहता है, परन्तु क्या कभी आपको इससे भिन्न किसी और प्रकार की सजगता का अनुभव हुआ है? शरीर तथा मन से परे की सजगता ही आत्म-साक्षात्कार है। उपनिषदों की

भाषा में कहें तो मनुष्य के सनातन एवं शाश्वत अस्तित्व का ज्ञान, अनुभव तथा दर्शन ही आत्म-साक्षात्कार है।

कई बार आत्म-साक्षात्कार के अनुभव तथा ज्ञान को साधक गलत समझ बैठते हैं। ध्यान के अभ्यास के समय हम कई बार शारीरिक चेतना को खो देते हैं, तथा हमें प्रकाश पुंज दिखाई देते हैं, सुन्दर दृश्य प्रकट होते हैं तथा विविध अनुभव प्राप्त होते हैं, और अपनी अज्ञानता वश हम इसे ही आत्म-साक्षात्कार मान बैठते हैं। किन्तु ये सभी अनुभव ध्यान के विभिन्न स्तर तथा आत्म-साक्षात्कार की यात्रा के विभन्न पड़ाव मात्र हैं, जिनसे गुजर कर हम अन्ततः अपने गन्तव्य आत्म-साक्षात्कार की अवस्था तक पहुँचते हैं।

आत्म-साक्षात्कार की अन्तिम प्रक्रिया में क्या घटित होता है, क्या अनुभव होता है? जब तक इसकी प्राप्ति न हो जाय, साधक को इसके अनुभव का कोई अनुमान नहीं हो सकता। परन्तु उस व्यक्ति के लिए भी जिसने आत्म-साक्षात्कार की उपलब्धि तथा अनुभव प्राप्त कर लिया है, अपने अनुभवों को व्यक्त कर सकना कठिन है, क्योंकि यह पूर्णरूपेण स्वानुभव का विषय है। जब तक आप स्वयं अपनी जिह्वा से मीठे स्वाद का अनुभव न कर लें, तब तक आप भले ही अपने कानों से मीठे स्वाद के बारे में कितना ही सुन लें, आपको मिठास क्या है उसका वास्तविक ज्ञान नहीं हो पाएगा, और न ही आप किसी को शब्दों में बोलकर मीठे स्वाद के बारे में समझा पाएँगे।

ध्यान के अभ्यास का प्रारम्भ प्रत्याहार से होता है। इसका शाब्दिक अर्थ चेतना को बाहरी दुनिया से खींचना होता है। यह राजयोग का पंचम सोपान है। प्रत्याहार के अभ्यास में इन्द्रियों के माध्यम से होने वाले अनुभवों से मन को खींचा जाता है तथा इन्द्रियों से सम्बन्ध विच्छेद किया जाता है। मन ही शरीर के विभिन्न प्रतिष्ठानों से विभिन्न इन्द्रिय विषयक अनुभव प्राप्त करता है, किन्तु जब चेतना अन्तर्मुखी हो जाती है तब यद्यपि आँखें खुली रहती हैं वे देखती नहीं, कान सुनते नहीं, शरीर अनुभव नहीं करता। अनेक साधक इसे बहुत ऊँची आध्यात्मिक अवस्था मान लेने की गलती कर बैठते हैं, परन्तु यह तो प्रत्याहार प्रारम्भिक अवस्था मात्र है।

ध्यान में बाह्य जगत् के अतिक्रमण की प्रक्रिया के दौरान अनेक आन्तरिक अनुभव होते हैं। कभी-कभी गलती से इन्हें टेलेपेथिक संचार यानि विचार संप्रेषण मान लिया जाता है। इन स्वप्नों तथा दृश्यों का कारण गहरी एकाग्रता है और ये आन्तरिक व्यक्तित्व के प्रतीक होते हैं। इनका

प्राकट्य चेतना के सूक्ष्म से सूक्ष्मतर आयामों में विस्तार होने पर होता है। जब आप बाजार में चलते हैं तो अपने दोनों ओर दुकानें देखते हैं जो तरह-तरह की होती हैं। हर कदम पर दृश्य परिवर्तित होता जाता है। ठीक इसी प्रकार ध्यान में भी जल्दी-जल्दी बदलने वाले रंग-बिरंगे दृश्य तथा अनुभव प्राप्त होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि मन चेतन, अवचेतन तथा अचेतन स्तरों से गुजर रहा है। इस यात्रा में चेतना के विभिन्न ऊँचे और गहरे आयामों का अनुभव होता है। ये अनुभव सूक्ष्मलोक, पूर्वजन्म या आपके वर्तमान जीवन से सम्बन्धित हो सकते हैं। कभी-कभी चेतना विविध रूप धारण करती है और साधक अपने स्वभाव एवं चरित्र के अनुसार अपनी चेतना को किसी पर्वत, वन, आदमी या औरत के रूप में भी देख सकता है। यह सब ध्यान की गहराई में घटित होता है, परन्तु इन्हें ध्यान के उच्चतर लक्ष्य की प्राप्ति के पथ के अवरोध मानकर इनकी अवहेलना करना ही श्रेयस्कर है। ध्यान के मार्ग में होने वाले व्यवधान चाहे बाह्य हों अथवा आन्तरिक, उन पर पूर्ण नियन्त्रण होना अनिवार्य है। इन दृश्यों और प्रतीकों की बाधाओं को दूर करने हेतु आपको एक आन्तरिक अचेतन आत्मबल तथा संकल्पशक्ति को विकसित करना होगा।

चेतन स्तर का आत्मबल मात्र बाह्य अड़चनों तथा व्यवधानों को दूर करने में सहायक होता है। जब तक साधक बाह्य-चेतना का अतिक्रमण नहीं कर

लेता चेतन-आत्मबल इन बाधाओं को दूर करने में सहायक होता है। किन्तु जैसे ही साधक बाह्य चेतना के परे हुआ कि स्वप्नों तथा दृश्यों के लोक में पहुँच जाता है, उस समय एकाग्रता के लिए एक प्रतीक अथवा अवलंबन की आवश्यकता होती है। यहाँ उसे ध्यान मार्ग की बाधाओं को हटाने के लिए अचेतन-आत्मबल की आवश्यकता पड़ती है।

अचेतन-आत्मबल का विकास ध्यान के समय माला के उपयोग द्वारा होता है। माला एक सिरे से दूसरे सिरे तक सरकाई जाती है। सुमेरु तक पहुँचने पर उसे पुनःपलट कर प्रारंभिक मनके पर आ जाते हैं। सुमेरु को कभी नहीं लाँघा जाता। इस प्रकार व्यवस्थित रूप से समय-समय पर ध्यान टूटता है। निश्चित समयावधि पर ध्यान का टूटना ही इस अचेतन-आत्मबल का रहस्य है।

देखने में यह तरीका कुछ विचित्र लग सकता है, लेकिन गुरु-परम्परानुसार यह आवश्यक है कि नौसिखिये साधक का ध्यान, एक निश्चित समयावधि में बार-बार टूटे ताकि अचेतन-आत्मबल का विकास हो और वह स्वयं को चेतना के किसी भी स्तर से स्वेच्छापूर्वक हटा सके। स्वप्नों तथा आंतरिक दृश्यों के लोक से हटना सफल ध्यान के लिए आवश्यक है।

हो सकता है आपको अपना ध्यान एक से अधिक बार तोड़ना पड़े। अनेक साधकों का यह मानना है कि ध्यान में निरन्तरता होनी चाहिए, परन्तु मेरा यह विश्वास है कि जब तक ध्यान में स्थिरता न आ जाये तथा ध्यान का प्रतीक चिदाकाश में आलोकित न हो जाय, ध्यान का बार-बार टूटना जरूरी है।

कभी-कभी ध्यानावस्था में कुछ समय के लिए चेतना का निलंबन हो जाता है या कुछ क्षणों के लिए सजगता का लोप हो जाने पर शून्यता का अनुभव होता है। किसी-किसी को मानसिक सम्प्रेषण अथवा भविष्य में होने वाली घटनाओं का पूर्वाभास भी हो सकता है। परन्तु ये सब ध्यान में बाधक हैं तथा इन पर काबू पाना कठिन है। अनेक साधक तो इन बाधाओं के जाल में बुरी तरह उलझ जाते हैं। कुछ साधक अपनी अतीन्द्रिय क्षमताओं को विकसित करके या तो आध्यात्मिक चिकित्सक या विचार सम्प्रेषण के माध्यम मात्र रह जाते हैं। चाहे इन बातों को बड़ी उपलब्धि भले ही कहें, किन्तु योग के दृष्टिकोण से यह आध्यात्मिक जीवन का पतन है। साधक ध्यान के लक्ष्य तथा सर्वोच्च उपलब्धि से दूर सिद्धियों के एक अलग पथ पर अग्रसर हो जाता है। साधक अपने जीवन में या तो सिद्धि प्राप्त कर सकता है या साक्षात्कार, दोनों एक साथ नहीं।

इस प्रकार ध्यान योग की साधना में तीन तरह की बाधाएँ आती हैं। एक चेतन स्तर पर विभिन्न विचार तरंगें तथा बाह्य हलचलें, दूसरी – सूक्ष्म स्तर पर स्वप्न तथा दृश्य के रूप में, तीसरी – उच्च अवस्था में भविष्य की घटनाओं के पूर्वाभास तथा पूर्व जन्म की बातों की स्मृति आदि के रूप में। इनमें से पहले दो प्रकार की बाधाओं पर विजय, चेतन तथा अचेतन आत्मबल द्वारा सम्भव है, परन्तु तीसरी बाधा पर विजय प्राप्त करना तथा ध्यान में प्रगति बड़ी कठिन हो जाती है। बहुत-से साधक इस अवस्था से आगे बढ़ ही नहीं पाते हैं।

गहरे ध्यान में जब साधक को आनेवाली घटनाओं का पूर्वाभास होता है तो उसका ध्यान टूटना स्वाभाविक है। परिणाम स्वरूप वह संवेदनशील हो जाता है। यह अपने में भले ही एक बड़ी उपलब्धि लगे, किन्तु जहाँ तक ध्यान का सवाल है, यह एक बहुत बड़ा व्यवधान है। इसलिए आध्यात्मिक पथ से इसे दूर करना अनिवार्य है।

ध्यान में सफलता प्राप्ति के लिये इस बिन्दु पर सतर्कता आवश्यक है। ध्यान योग के साधक को इन सिद्धियों, शक्तियों तथा चमत्कारी उपलब्धियों के प्रति प्रारंभ से ही उदासीन रहना चाहिये। साधक को कर्मयोग का भी अभ्यास करना चाहिए, शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक स्तर पर। यदि वह कर्मयोग करता है तो ध्यान के द्वारा अर्जित अतिरिक्त ऊर्जा का सही दिशान्तरण होगा तथा इसका बाधक शक्तियों में रूपांतरण नहीं हो पाएगा। गीता कहती है कि साधक को सक्रिय जीवन से दूर नहीं भागना चाहिये, तथा अपने को कर्मयोग एवं कर्तव्यों के पालन में पूर्णतः संलग्न कर लेना चाहिए। ध्यान की उच्चावस्था में पड़ने वाली बाधाओं के शमन हेतु यह अति आवश्यक है कि अतिरिक्त आध्यात्मिक शक्ति की धारा को कर्मयोग के माध्यम से उचित दिशा प्रदान की जाय।

इस अंतिम बाधा पर सफल नियंत्रण प्राप्त कर लेने के बाद ही साधक को उस परम ज्ञान तथा आत्म-साक्षात्कार की प्राप्ति होगी जिसकी उपलब्धि बुद्ध, महावीर, हज़रत मुहम्मद, ईसा मसीह, गुरु नानक तथा अन्यों को हुई थी। जब आप इस चरम उपलब्धि के समीप पहुँचते हैं तो बड़े ही विलक्षण अनुभव होते हैं। आपकी चेतना अक्षुण्ण बनी रहती है। आप बाह्य जगत् से बेखबर स्वयं में ही रमे रहते हैं तथा स्वयं को सतत् सजग पाते हैं।

आत्म-साक्षात्कार का अनुभव अवर्णनीय होता है। इस समय आप चेतना के बिन्दु पर होते हैं जहाँ कुछ समय के लिये बाह्य जगत् का लोप तो हुआ जैसा

लगता है, किन्तु चेतना तथा आंतरिक प्रकाश, ज्यों-के-त्यों विद्यमान रहते हैं। आत्म-साक्षात्कार एक प्रक्रिया का प्रारम्भ मात्र है, न कि अंतिम गंतव्य, क्योंकि आत्म-साक्षात्मकार का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। जीव चेतना से प्रारम्भ होकर यह प्रक्रिया शनैः शनैः ऊपर चढ़ती है और व्यक्तित्व के भीतर यह सजगता घनीभूत होती जाती है। आप इस सजगता के विस्तार तथा विकास का प्रत्यक्ष अनुभव कर सकते हैं। जिस प्रकार हम इस दृश्य जगत् का अनुभव कर सकते हैं, ठीक उसी प्रकार हम इस चेतना का भी अनुभव करते हैं।

ज्ञान तथा अनुभव दो नितान्त भिन्न वस्तुएँ हैं। आत्म-साक्षात्कार की इस प्रक्रिया में इस भेद तथा भिन्नता का बोध होता है। आत्म-सक्षात्कार की प्रक्रिया में सजगता प्रखर होती जाती है, तथा आत्म-साक्षात्कार की उस सर्वोच्च अवस्था में आपकी सजगता इतने उच्च स्तर पर होती है कि आप उसका वास्तविक तथा स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं। आत्म-साक्षात्कार की इस प्रक्रिया के दौरान समस्त अज्ञान, व्यवधान, अशुद्धियाँ तथा कठिनाइयाँ समाप्त हो जाती हैं, तथा जीवन में व्याप्त सभी शंकाएँ समाप्त हो जाती हैं, और तभी आत्मज्ञान का दिव्य प्रकाश प्रकट तथा आलोकित होता है। आन्तरिक दिव्यता स्वतः प्रकाशित होने लगती है।

शरीर के परे मन तथा मन के परे उच्च आध्यात्मिक व्यक्तित्व होता है। यह आध्यात्मिक व्यक्तित्व हमारे भीतर सतत् सक्रिय है, परन्तु हम उसके प्रति सजग नहीं रहते हैं। हम चौबीसों घंटे श्वास-प्रश्वास करते हैं, परन्तु हमेशा उससे बेखबर रहते हैं। हम अपने हृदय की धड़कनों के प्रति भी सजग नहीं रहते। इसी प्रकार शरीर तथा मन के भीतर अनेक प्रतिक्रियाएँ चलती हैं। हम न केवल उनसे बल्कि अपने जीवन में घटने वाली अनेक घटनाओं से भी बेखबर रहते हैं। इसका मुख्य कारण यह हो सकता है कि हम इतने अधिक बहिर्मुखी हैं कि हम यह नहीं जानते हैं कि हमारे भीतर क्या है अथवा क्या हो रहा है। इसी तरह हमारे भीतर जो उच्च चेतना है उसके प्रति हम अपनी सजगता को अनुभव द्वारा बढ़ा सकते हैं।

मैं इस विषय को रमण महर्षि के एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करूँगा। एक दिन उन्हें ऐसा अनुभव हुआ मानो वे मर रहे हैं। वे फर्श पर लेटे थे और उन्हें ऐसा लगा मानो वे विभक्त होकर दो हो गए। तब उन्होंने स्वयं को जमीन पर लेटे हुए इतने स्पष्ट रूप से देखा जैसे मैं आपको और आप मेरे को देख रहे हैं। ठीक इसी प्रकार हमारे लिये भी आध्यात्मिक व्यक्तित्व को देख सकना संभव है,

परन्तु यह कदाचित् ही संभव है क्योंकि हम में से अधिकांश लोगों को स्वयं के अस्तित्व का बोध बिल्कुल नहीं है। क्षण भर के लिये सोचिये कि सुबह से शाम तक आपको अपने भौतिक अस्तित्व का ज्ञान कितनी देर रह पाता है।

न तो हमारे पास इतना समय ही है और न तो हम इतने सजग ही हैं कि अपने भौतिक अस्तित्व के प्रति सतत् सजग रहें। यदि ऐसे होते तो दैनिक जीवन की तारतम्यता ही टूट जाती, किन्तु यह संभव है। जिस प्रकार आप अपने शरीर के प्रति जागरूक रह सकते हैं, ठीक उसी प्रकार अपनी विचार प्रक्रिया के प्रति भी जागरूक रह सकते हैं। परन्तु क्या आप आत्मा के प्रति

स्वेच्छा से जागरूक हो सकते हैं? नहीं। फिर भी यह एक बड़ी महत्त्वपूर्ण बात है कि आप अपने भीतर के अमर पुरुष के प्रति, जो आप का सनातन अंश है, सतत् जागरूक रहें। मनुष्य का शरीर तथा मन मृत्यु को प्राप्त होते हैं, किन्तु वह सनातन अंश कभी नहीं मरता।

उसका कोई आकार या स्वरूप नहीं होता तथा उसका अनुभव भी अवर्णनीय होता है। वह मात्र अनुभव की ही विषय-वस्तु है। सन्तों ने उसका नाम सत्-चित-आनन्द दिया है। प्रत्येक मनुष्य में निहित उस परम पुरुष के ये तीन गुण हैं। उपनिषद् कहते हैं कि वह स्वर्णिम पुरुष है तथा कुछ उसे आलोक सम्पन्न बताते हैं। वह जो भी हो, उसे जानना कठिन अवश्य है। समस्त आध्यात्मिक साधकों से मेरा यही अनुरोध है कि मन तथा शरीर से परे उस आध्यात्मिक सनातन अस्तित्व के प्रति सतत् सजगता का अभ्यास करते रहें।

आत्मज्ञान के विषय में बोलना एक बहुत कठिन कार्य है, और मैं वर्षों से इस विषय पर अपने विचार तथा समझ को स्पष्टता देने के लिए प्रयत्नशील हूँ। छः वर्ष की बाल्यावस्था में एक अनुभव के साथ मेरा आध्यात्मिक जीवन प्रारम्भ हुआ। मैं स्वयं अपने शरीर को स्पष्ट रूप से देख सकता था, किन्तु उसका अनुभव नहीं कर पा रहा था, तथा मुझमें शरीर तथा मन की सजगता से परे एक भिन्न प्रकार की सजगता थी। उसके बाद अनेक वर्षों तक उस अनुभव की पुनरावृत्ति का मैंने प्रयास किया, किन्तु यह सम्भव नहीं हो पाया। जब मैं सन् 1943 में प्रथम बार स्वामी शिवानन्द जी से मिला तो उन्होंने मुझे एक सूत्र दिया 'अपने कर्मों का पूर्ण क्षय करो।' साधक को कर्मों का बोझ हल्का करना ही चाहिये। आपकी चेतना पर संस्कारों, वासनाओं, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद आदि की अनेक परतें हैं। इन सबका पूर्ण क्षय अनिवार्य है। आत्मज्ञान एवं आत्म-साक्षात्कार की यात्रा में कर्म तथा संस्कारों का निष्कासन अनिवार्य शर्त है।

यदि आप कर्म क्षय कर सकें तो ध्यान के सफल परिणाम मिलेंगे, किन्तु कर्मों का क्षय कर्मों से संभव नहीं है। प्रत्येक कर्म अपने साथ संस्कार लाता है, अतएव कर्मों का क्षय कर्मयोग से होता है। अब प्रश्न उठता है कि कर्म तथा कर्मयोग में मौलिक अन्तर क्या है? कर्मयोग अनासक्ति के साथ किए गए काम अर्थात् बिना फल की आशा से किये गए कर्म को कहते हैं। कर्म के साथ आसक्ति तथा फल की आशा होती है। कर्म से उन्माद, तनाव तथा परेशानी का जन्म होता है, कर्मयोग से नहीं। कर्म से थकान आती है जबकि

कर्मयोग से एक विशेष प्रकार का संतोष एवं आनन्द का अनुभव होता है। कर्मयोग का तात्पर्य निःस्वार्थ एवं निष्काम समर्पण से है जबकि कर्म का उद्देश्य स्वार्थपूर्ण एवं सकाम होता है। कर्म में हर बात स्वयं के लिये परन्तु कर्मयोग में सब कुछ दूसरों के लिए होता है। कर्म तथा कर्मयोग में यही मौलिक भेद है। कर्म के द्वारा संस्कारों की वृद्धि होती है जबकि कर्मयोग के माध्यम से व्यक्तित्व प्रतिदिन निर्मल होता है और अन्त में अटूट मानसिक शान्ति का अनुभव होता है।

एक बार जीवन में आत्म-ज्ञान की उपलब्धि हो जाए तो फिर जीवन में अज्ञान तथा अंधकार का अस्तित्व ही शेष नहीं रह जाता। मात्र स्पष्ट रूप से ज्ञान का प्रकाश दृष्टिगोचर होता है। यह ज्ञान-आलोक बड़ा ही शान्त व निर्मल है। इसमें सर्वत्र शांति ही शांति है, तनाव एवं असंतोष नाम की कोई वस्तु नहीं, सर्वत्र आनन्द ही आनन्द व्याप्त है। आत्मज्ञान की प्राप्ति के इस क्रम में सत्य एवं असत्य का विवेक हो जाता है। जब कोई व्यक्ति आत्मज्ञान को प्राप्त कर लेता है तो उसके व्यक्तित्व में ही प्रकाश की अनुभूति होती है तथा उसे इसका प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

आत्म-साक्षात्कार ही मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य है। इसी की प्राप्ति के लिए प्रत्येक प्राणी जन्म लेकर इस भौतिक अस्तित्व को धारण करता है। यही मानव जीवन की परमोत्कृष्ट उपलब्धि है। इसे चाहें तो सर्वोच्च ज्ञान, आत्मज्ञान, निर्वाण, दर्शन, समाधि अथवा कैवल्य के नाम दे सकते हैं, किन्तु ये सब एक ही हैं। जीवन के इस महान् उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये भक्ति, ज्ञान, कर्म तथा राज योग का संयुक्त अभ्यास आवश्यक है। ध्यान की साधना कर्मयोग के साथ मिलाकर करनी चाहिए। यदि आप तीन घण्टे ध्यान करते हैं तो आपको दस घण्टे कर्मयोग और यदि आप छ: घंटे ध्यान करें तो अठारह घण्टे कर्मयोग करना चाहिए। इसे मैं इस प्रकार समझा सकता हूँ। जैसे सब्जी में नमक एक निश्चित अनुपात में ही डालेंगे। कभी भी सब्जी तथा नमक में बराबर अनुपात नहीं रखा जाता। इसी प्रकार ध्यान जीवन का नमक तथा कर्मयोग सब्जी के समान होना चाहिए। इस मामले में आलस्य को कभी भी स्थान मत दीजिए। ध्यान तथा कर्मयोग का सामंजस्य साधक में सजगता का विकास करता है, जिसे वह अपने जीवन, व्यवहार, विचार तथा समाज के प्रति अपने योगदान के रूप में स्पष्ट देख सकता है।

– 20 मई 1968, तोक्यो विश्वविद्यालय, जापान

योग की विश्व-व्यापकता

आज योग अन्तरराष्ट्रीय लोकप्रियता तथा दिलचस्पी का विषय हो गया है, लेकिन फिर भी इसके विषय में अनेक भ्रांतियाँ विद्यमान हैं। योग केवल आत्म-साक्षात्कार का मार्ग ही नहीं, बल्कि प्रायौगिक तथा मनोवैज्ञानिक विषय भी है। आत्म-साक्षात्कार सभी के लिए सहज नहीं होता, न ही सभी में उसके लिए पात्रता होती है और न ही सभी उसके लिए तैयार ही होते हैं।

इसके पहले कि मैं आपसे कुछ कहूँ, यहाँ शान्ति होना अनिवार्य है। शोरगुल तथा अशान्ति के होते न तो मेरे लिये बोलना संभव होगा और न आपके लिये सुनना-समझना। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति तभी संभव होती है, जब शान्ति तथा मानसिक सन्तुलन प्राप्त हो जाय। परन्तु कई बार अनेक साधक जो आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील होते हैं, अपने अल्प, अधूरे ज्ञान तथा गलत अवधारणाओं के फलस्वरूप ऐसा समझते हैं कि उन्हें पूर्णरूपेण अन्तर्मुखी हो जाना चाहिए। फलस्वरूप वे मनोवैज्ञानिक दृष्टि से असामान्य तथा समाज में जीने के लिए

अनुपयुक्त हो जाते हैं। योग आध्यात्मिक ज्ञान एवं आत्म-साक्षात्कार प्राप्ति का एक साधन है, इसमें दो मत नहीं हो सकते, परन्तु इसकी प्राप्ति के पूर्व यह महत्त्वपूर्ण है कि आन्तरिक शान्ति, सन्तुलन तथा पूर्ण विश्राम कैसे प्राप्त किया जाय। विश्राम तथा शान्ति की अवस्था को प्राप्त करना आधुनिक समाज में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है।

ऐसे लोग जो यह मानने के लिये तैयार नहीं कि हम अशान्त तथा विक्षिप्त हैं, वे भी जब शान्ति, सन्तुलन आदि के विषय में गम्भीरतापूर्वक सोचते हैं, तो स्वीकार करते हैं कि वास्तव में उनमें इन गुणों की कमी है। अनेक लोग यह कहते हैं कि उनका मन बड़ा शान्त है, उन्हें कोई चिन्ता, परेशानी या विक्षिप्तता नहीं। साथ ही वे मानसिक शान्ति तथा सन्तुलन आदि की बातों में विश्वास भी नहीं करते। यदि इन लोगों का मनोवैज्ञानिक परीक्षण तथा सम्मोहन का प्रयोग कर समूचे व्यक्तित्त्व का अध्ययन किया जाए, इनके सहज कार्यों तथा स्वप्नों का विश्लेषण किया जाए, तो हमें इनके वास्तविक व्यक्तित्व में व्याप्त भय तथा कुण्ठाओं का दर्शन होगा। प्रत्येक व्यक्ति का सर्वप्रथम कर्त्तव्य यह है कि वह जाने कि वह दु:खी है तथा दु:ख जीवन का एक तथ्य है। यही योग का प्रथम सोपान है। हममें से अनेक अपने अज्ञान में ही सुखी हैं। हम मान लेते हैं कि हम सुखी हैं, परन्तु हमारी तनावपूर्ण माँसपेशियाँ, स्वप्न, संवेग तथा मन इस सत्य को उद्घाटित करते हैं कि जो हम मान बैठे हैं, हम वैसे नहीं हैं। समाज, परिवार तथा आपस में हम जिस तरह का व्यवहार तथा प्रतिक्रिया प्रकट करते हैं, यह बताता है कि हमारी शान्ति तथा सन्तुलन की प्राप्ति शून्य के बराबर है।

योग वह पद्धति है जो पूर्ण शान्ति, धैर्य तथा सन्तुलन की प्राप्ति में हमारी सहायता करती है। आधुनिक मनोविज्ञान तथा भारतीय दर्शन तीन प्रकार के तनावों की बात करते हैं। प्रथम हैं स्नायविक अथवा शारीरिक तनाव, दूसरे हैं मानसिक तथा तीसरे को भावनात्मक तनाव कहते हैं। ये तीन प्रकार के तनाव मनुष्य के अस्तित्व में पूर्णतः व्याप्त हैं। यदि आप शारीरिक श्रम करें तब भी ये तनाव बने रहते हैं, अथवा आप हफ्तों या महीनों एकांत में रहकर या आराम कुर्सी में पड़े रहकर इन्हें हटाने का प्रयत्न करें तो भी आप इन्हें हटा नहीं पायेंगे, बल्कि यह हो सकता है कि आराम-कुर्सी वाली जीवनचर्या से ये तनाव और भी बढ़ जाएँ। मनुष्य में तनाव एक स्वाभाविक अवस्था है, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप कठोर शारीरिक परिश्रम करते हैं अथवा भावनात्मक आपदा एवं अशांति के क्षणों से गुजर रहे हैं। तनाव तो रहेंगे ही।

इसलिए यह जरूरी है कि इनसे मुक्ति पायी जाय। इसके लिए योगमार्ग का अवलम्बन लेना होगा।

कुछ समय से शोधशालाओं, मनोवैज्ञानिकों तथा विज्ञानवेत्ताओं में योग रुचि तथा चर्चा का विषय बन गया है। न केवल अमेरिका बल्कि यूरोप, रूस, जापान तथा पोलैण्ड में विख्यात वैज्ञानिक भी इस बात की जाँच कर रहे हैं कि यौगिक सजगता की पहुँच मनुष्य के अस्तित्व में कितनी गहराई तक है। डॉ. सिगमण्ड फ्रायड ने गहन मनोवैज्ञानिकी खोज की है। संभवतः आप सभी उसकी मनोविश्लेषण पद्धति की जानकारी रखते होंगे। परन्तु अनुभव तथा प्रयोगों से यह पाया गया है कि यह पद्धति सर्वसाधारण के लिये सुलभ नहीं है, क्योंकि पूरी क्रिया इतनी क्लिष्ट तथा तकनीकी है कि उसे समझ पाना प्रत्येक के लिये संभव नहीं है। किन्तु योग पद्धति द्वारा यह संभव है कि प्रत्येक व्यक्ति स्वयं का मनोविश्लेषक बन सकता है।

योग शब्द का मतलब सामंजस्य, एकता एवं मिलन होता है। यह व्यक्ति के भीतर दो ध्रुवों पर स्थित परस्पर विरोधी व्यक्तित्वों के बीच एकता तथा सामंजस्य है। हमारा अस्तित्व दो व्यक्तित्वों में विभक्त है, जो हमारे भीतर सतत् सक्रिय रहते हैं। हमारे भीतर उच्च तथा निम्न मन के बीच तथा चेतन, अवचेतन तथा अचेतन शक्तियों के बीच सतत् विरोधाभास तथा संघर्ष चलता रहता है। हमारे ये दोहरे व्यक्तित्व तथा ये अन्तर्द्वन्द्व इतने क्लिष्ट तथा व्यापक हो गये हैं कि हम स्वयं अपने व्यक्तित्व के केन्द्र बिन्दु से संपर्क साधने तथा अपने को वहाँ स्थित करने में असमर्थ हैं।

मानसिक विकास के लिए, अपने व्यक्तित्व के समन्वित पुनर्नियोजन के लिये विशेष वेशभूषा तथा सामाजिक शिष्टाचार का विकास ही पर्याप्त नहीं है। यह तो स्पष्ट है कि मनुष्य का अस्तित्व एवं व्यक्तित्व मन की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म तथा गहरा होता है। समन्वित व्यक्तित्व के विकास के लिये आपको अपनी चेतना की गहराई में उतरना होगा। कोई आदमी देखने में बदसूरत या कमजोर हो सकता है, लेकिन उसकी चेतना एवं सजगता औसत मनुष्य से कहीं अधिक गहरी हो सकती है। ऐसा मनुष्य जिसका व्यक्तित्व पूर्णरूपेण समन्वित हो, जीवनमुक्त है क्योंकि वह कुण्ठाओं, कलहों तथा गहन अन्तर्निहित तनावों से मुक्त है। उसकी कार्य-प्रणाली पूरी तरह से निर्दोष होती है।

योग के इसी पक्ष ने वैज्ञानिकों की रुचि को आकर्षित किया है। हाल में वैज्ञानिकों ने शीर्षासन पर कुछ शोध कार्य किया है। उनके नतीजे इतने

सकारात्मक रहे कि अब यह निर्णायक ढंग से कहा जा सकता है कि जिन्हें अनिद्रा, चिंता अथवा स्नायुव्याधि है, शीर्षासन के अभ्यास द्वारा इनसे छुटकारा पा सकते हैं। रूसी वैज्ञानिक तो इससे भी एक कदम आगे बढ़ गये हैं, उन्होंने एकाग्रता के अभ्यासों से प्राप्त लाभ की संभावनाओं तथा व्यक्तित्व एवं व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों पर शोध प्रारम्भ किए हैं।

जब मनुष्य क्रोध, कलह तथा कुण्ठाओं से भर जाता है तो उसके शरीर में कुछ रासायनिक परिवर्तन होते हैं। व्यग्रता तथा मानसिक संताप से समूची अन्त:स्रावी ग्रंथियाँ प्रभावित हो जाती हैं। जब मनुष्य चिन्ता, परेशानी, तनाव तथा व्यग्रता से ग्रस्त होता है तो उस समय हृदय भी क्षुब्धता का अनुभव करता है। यह सब क्यों होता है? इसकी अभी तक पूर्णरूपेण वैज्ञानिक जाँच तो नहीं हो सकी है, परन्तु मैं सोचता हूँ कि आपको इस विषय पर कुछ बातें बता दूँ।

जिस समय मन एवं मस्तिष्क क्रोध तथा तनाव के चंगुल में आते हैं तब शरीर में कुछ विषाक्त द्रव्य उत्पन्न होते हैं जो रक्त में मिलकर पूरे शरीर में व्याप्त हो जाते हैं। प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से यही विषाक्त द्रव्य, मधुमेह, नैफ्राइटिस, अल्सर, अनिद्रा तथा कोरोनरी थ्राम्बोसिस जैसी व्याधियों के लिए जिम्मेवार हैं।

आप सब बड़े सुशिक्षित, परन्तु प्रतिस्पर्धापूर्ण समाज में रहते हैं। आपको यह मालूम ही होगा कि कोरोनरी थ्राम्बोसिस हृदय की नहीं, बल्कि सफलता की बीमारी है। इसका जन्म प्रतिस्पर्धा तथा तनाव से होता है। यह मेरा ही नहीं, उन सबका निष्कर्ष है जिन्होंने इस बीमारी पर शोध किया है। उदाहरण के लिए किसी अपराधी, लोकनेता, पुलिस को चकमा देने वाला अथवा आयकर चोरी करने वाले को लें। इनमें से प्रत्येक के अचेतन मन में भय छिपा है। अपने इस भय से छुटकारा पाने के लिये वह मदिरा पान या जुआ जैसा कोई व्यसन पाल लेता है, परन्तु इन सबके बावजूद भय तो बना ही रहता है। इसी अचेतन भय एवं कुण्ठा के फलस्वरूप होने वाला अति अम्लीय रस स्राव पेप्टिक अल्सर को उत्पन्न करता है।

यही भय एवं कुण्ठा जब अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त हो जाए तो उसका परिणाम युद्ध होता है। अतः वर्तमान परिवेश में यदि हम व्यक्तिगत तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त इसी भय का विश्लेषण करें तो पायेंगे कि इस पर प्रभावी अंकुश रखने की महती आवश्यकता है। यह अंकुश धार्मिक मान्यताओं के रूप में नहीं हो सकता। इतिहास साक्षी है कि इस संदर्भ में

धर्म आज तक असफल रहा है। कानून, पुलिस, सेनाएँ, सरकार, संविधान आदि सभी इस संदर्भ में असफल ही रहे हैं। इस संदर्भ में व्यक्ति के अन्तर से प्रस्फुटित आध्यात्मिक अनुशासन तथा स्वयं को सुधारने एवं विकास की चाह ही एक सफल समाधान सिद्ध हो सकता है, न कि ऊपर से थोपा गया कोई कानून, संविधान अथवा धार्मिक आदेश। यही इस समस्या का सफल समाधान है और यह तभी सम्भव हो सकता है जब व्यक्ति के जीवन में योग के प्रति सजगता हो।

अब मैं पुनः शोधकर्ताओं के अन्वेषणों के विषय में चर्चा करूँगा। ये शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भावनात्मक उत्तेजना और तनाव के फलस्वरूप ही शरीर में त्रुटिपूर्ण रसस्राव होते हैं। माँस-पेशीय तनाव में कमी होने से भावनात्मक तनाव में भी कमी आती है। हमारा पूरा शरीर ही माँसपेशियों से निर्मित है, अतएव पूरे शरीर को ही विश्राम की अवस्था में लाना होगा। आपके श्वसन, रक्त संचरण, विसर्जन आदि सभी तन्त्रों को तनाव मुक्त कर पूर्ण विश्राम की अवस्था में लाना अनिवार्य है, परन्तु यह कैसे हो? इसके लिये सबसे पहले शोधकर्ताओं ने विख्यात भारतीय द्रव्य, गाँजे का प्रयोग किया है। कुछ समय पश्चात् उन्हें ज्ञात हुआ कि दृश्य तथा श्रव्य इन्द्रियों को थकाकर सजगता के स्तर में कमी और विश्रान्ति प्राप्त की जा सकती है। यह यौगिक प्रयोग है। उन्होंने अपने प्रयोगों में आँख और कान के द्वारा शरीर में विश्राम की स्थिति को स्थापित किया, परन्तु यह विश्राम अपूर्ण पाया गया।

शरीर तथा मन के पूर्ण विश्राम की अवस्था में भी शरीर सूक्ष्म स्तर पर काँपता रहा। कार्डियोग्राफ तथा अन्य यंत्र सकारात्मक परिणाम न बता सके। इसके बाद वैज्ञानिकों ने आसन एवं प्राणायाम द्वारा प्राप्त विश्राम पर प्रयोग किए, तथा इसे अधिक प्रभावशाली तथा सफल पाया। इसके अभ्यासी में उन्होंने गहन विश्राम के बड़े सकारात्मक लक्षण देखे।

अब वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा मात्र यह सिद्ध तथा निश्चय करना बाकी रह जाता है कि योगाभ्यास मनुष्य को अपने व्यक्तित्व की त्रुटियों को सुधारने में कहाँ तक सहायक हो सकता है। व्यक्तिगत त्रुटियों से मेरा तात्पर्य उन त्रुटियों से है जिनका व्यक्ति को कतई ज्ञान नहीं रहता और जो उसके शैशव काल से ही उसके अवचेतन मन में एकत्रित होती चली आ रही हैं। ऐसा भी होता है कि अनेक वर्षों तक इन संस्कारों से हम अनभिज्ञ रहते हैं, परन्तु समय पाते ही ये सक्रिय होकर हमें अपनी उपस्थिति का बोध कराते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि हमारे बचपन का कोई संस्कार अब प्रस्फुटित होकर सक्रिय हो गया हो, और हम इसकी सक्रियता के कारण को तो नहीं जान पाते, परन्तु इसके परिणामों से पूर्णरूपेण अवगत हैं। हो सकता है आप साइनस अथवा मधुमेह से पीड़ित हों, डॉक्टर इन रोगों की पहचान तो कर लेगा और हो सकता है अस्थायी रूप से इनका निदान भी कर दे, परन्तु वह नहीं बता सकता कि इनका मूल कारण क्या है। हम परिणाम को तो जानते हैं, किन्तु इन बीमारियों के मूल कारण हमारे अवचेतन मन में विद्यमान रहते हैं। ऐसी स्थिति में योग बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है। यह संभव है कि योग विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम का एक अंग बन जाय और तब प्रत्येक व्यक्ति के लिये अपने मन, व्यक्तित्व, विचार, विखंडित मानसिकता तथा परस्पर विरोधी व्यवहारों को योग के माध्यम से ठीक करना आसान हो जाय।

भारतीय दर्शन तथा ऋषि-मुनियों का यह स्थापित मत है कि शांति तथा आनन्द की प्राप्ति व्यक्ति को केवल अपने भीतर से होती है। यह आन्तरिक शान्ति तथा आनन्द की अवस्था आपकी भौतिक सफलता के होने या न होने से प्रभावित नहीं होती, उसका स्रोत भीतर ही है। सुख बाहर से प्राप्त हो सकता है, क्योंकि उसका आधार सफलता होती है, परन्तु आनन्द सफलता-असफलता पर आधारित नहीं होता। आनन्द तो चेतना की एक अवस्था है जो आपके मन, व्यक्तित्व, धारणा तथा दर्शन के विकसित होने पर स्वतः उत्पन्न होती है। यह सुख से सर्वथा भिन्न है।

इसकी प्राप्ति के लिये एक सरल अभ्यास की व्यवस्था है। आप सब ने ध्यान शब्द तो सुना ही होगा। ध्यान शब्द का धार्मिक सम्बन्ध होने के कारण मैं इसका प्रयोग करने में संकोच का अनुभव करता हूँ। अतएव इसके बदले जागरूकता एवं सजगता शब्द उपयोग करूँगा। इसके प्राथमिक अभ्यास में आपको भीतर गहराई में उतरना होगा, स्वयं को जानना होगा। अपने व्यक्तित्व को पूर्ण विश्राम देने से तात्पर्य है स्वयं के प्रति पूर्ण सजग हो जाना। जितना अधिक आप अपने शरीर, विचार, मन, श्वास तथा अवचेतन मन के प्रति सजग होंगे उतनी ही शीघ्रता से आप पूर्ण विश्राम की अवस्था को प्राप्त करेंगे।

यह कोई कठिन अभ्यास नहीं है, किन्तु इस बात का ख्याल अवश्य रखें कि मन बड़ा चंचल और शैतान है। कुछ क्षणों के लिये भी उसे अपने पूर्ण नियंत्रण में लाना कठिन कार्य है। किन्तु यहाँ मन के नियंत्रण का प्रश्न ही नहीं उठता। आपको अपने मन पर नियंत्रण नहीं करना है। कभी-कभी जब कोई विशेष विचार आपके मन में उठता है तो आप उसे दबाना चाहते हैं। ऐसा नहीं करना चाहिए, उस विचार को उठने दीजिये, दबाइये नहीं। बल्कि आपको तो सुबह, शाम अथवा रात्रि में जब भी संभव हो, आँखें मूंदकर शान्तिपूर्वक बैठकर बिना कुछ किए मात्र मन में उठने वाले विचारों को साक्षी भाव से देखना चाहिए। चाहे अच्छे विचार आयें अथवा बुरे, आपको परेशान होने की आवश्यकता नहीं। आप मात्र शान्त एवं तटस्थ द्रष्टा बनकर अपने मानस-पटल पर जो कुछ भी घटित हो रहा हो उसका अवलोकन करें, ठीक उसी प्रकार जैसे आप टेलिविजन पर कोई कार्यक्रम चुपचाप देखते हैं। धीरे-धीरे आप पायेंगे कि आप आज्ञा चक्र के मार्ग से अपनी चेतना के गहरे स्तरों पर उतरते जा रहे हैं, और विचारों के स्तर से दृश्यों के स्तर अर्थात् अवचेतन के धरातल पर उतरते जा रहे हैं। यह संपूर्ण क्रिया इसी प्रकार सम्पन्न होती है।

इस प्रक्रिया का अभ्यास प्राणायाम द्वारा भी किया जा सकता है। यह एक सरल विधि है। आपको सिर्फ अपने सहज श्वास-प्रश्वास के प्रति सजग रहना है। जब आप श्वास-प्रश्वास की सजगता का अभ्यास करेंगे तो पायेंगे कि मन धीरे-धीरे शान्त होता जाता है, और प्रत्येक क्षण आप और भी गहन विश्राम का अनुभव करते हैं। यह तो योग का संक्षिप्त परिचय मात्र है। इसके लिये कुछ समय तक अच्छे अभ्यास की आवश्यकता है। इस क्षेत्र में जानने के लिए ज्यादा नहीं, लेकिन करने के लिए बहुत है।

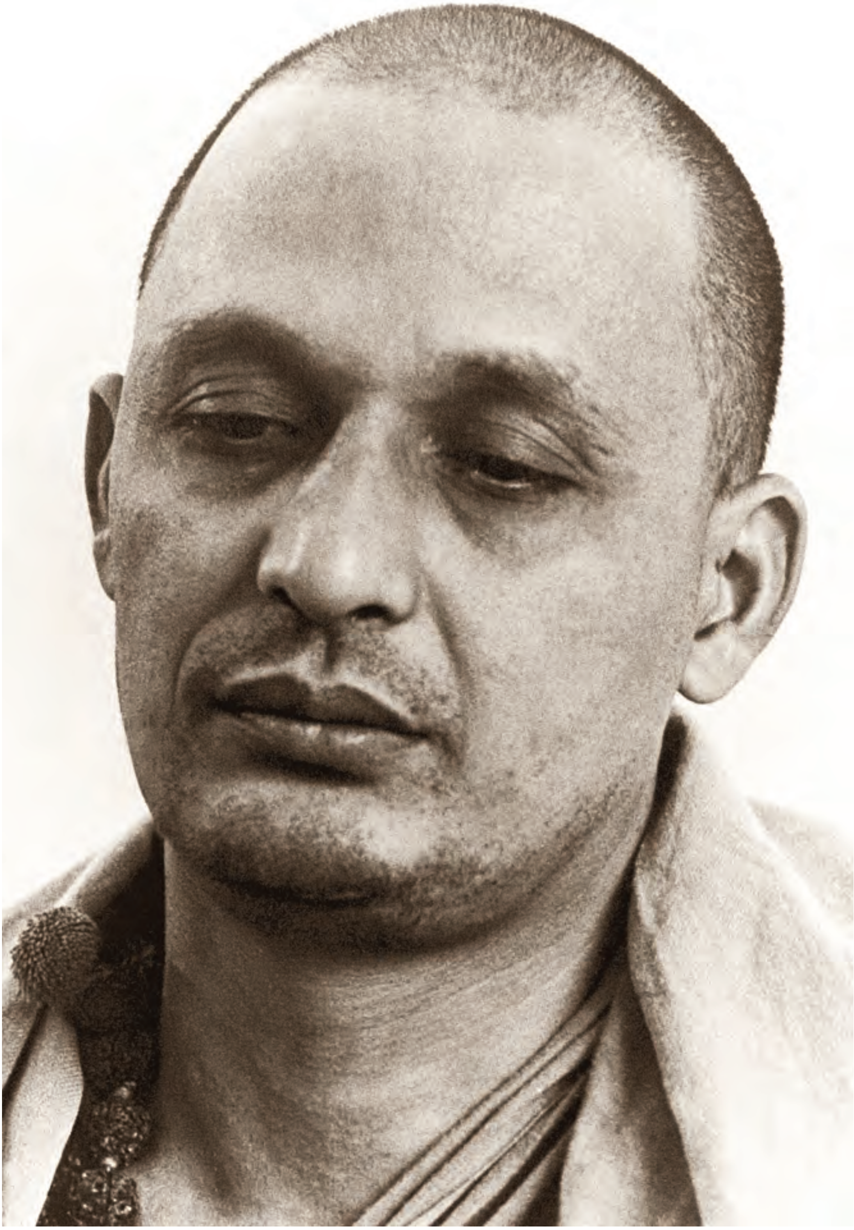

योग के विषय में एक भ्रान्ति है जिसका मैं निराकरण कर दूँ। लोगों का ऐसा विचार है कि योग का संबंध अद्भुत अथवा चमत्कारिक जीवन से है। ऐसा सोचना बिलकुल गलत है। आग पर चलने, तेजाब पीने या हृदय की धड़कन बन्द कर देने जैसे कार्यों को योग द्वारा प्राप्त उपलब्धि माना जाता है, पर आप कृपया ऐसा न समझें। संसार में ऐसी अद्भुत घटनाएँ होती हैं, उनके पक्ष या विपक्ष में मुझे कुछ नहीं कहना है। परन्तु जहाँ तक योग का संबंध है वह वैचारिक चेतना के पूर्ण विश्राम की प्रक्रिया है। जहाँ विचार क्षुब्ध हैं, वह योग की अनुपस्थिति का परिचायक है। यदि आपके विचार शान्त तथा स्थिर हैं और आप जीवन की समस्याओं का शान्तिपूर्वक समाधान ढूँढ लेते हैं तो उसी का नाम योग है।

योग अपने भीतर जागने की कला है, परन्तु एक सामान्य गलती यह होती है कि जैसे ही कुछ लोग एकाग्रता तथा ध्यान के अभ्यास के लिये बैठते हैं उनका मन एकदम शून्य हो जाता है। यह योग नहीं, सम्मोहन की अवस्था है। जब आप किसी बिन्दु या विषय पर अपनी चेतना को एकाग्र करते हैं तो आपकी चेतना दो दिशाओं में अग्रसर हो सकती है। प्रथम मार्ग में सजगता का धीरे-धीरे ह्रास होता चला जाता है तथा अन्ततः सजगता क्षीण होकर समाप्त हो जाती है। यह मार्ग सम्मोहन कहलाता है। दूसरा मार्ग है योग का,

जिसमें चेतना तथा सजगता का विस्तार किया जाता है। आप सतत् जागरूक एवं सजग रहते हैं, अतः बाह्य जगत् की चेतना समाप्त हो जाने पर भी आपकी अपने अस्तित्व की चेतना अखंड रहती है। स्वयं की चेतना ही शेष रहती है तथा विस्तृत होती रहती है। यह योग की प्रक्रिया है।

यदि ध्यान के अभ्यास को गलत विधि से किया जाय तो स्वचेतना धीरे-धीरे लुप्त होते हुए शून्य हो जायेगी तथा आप अपने भीतर व बाहर की सब बातों के प्रति शून्य हो जायेंगे। हमेशा इस बात का ख्याल रखिये कि जब भी आप ध्यान की प्रथम अवस्था में से गुजरें, स्वयं के प्रति सतत् जागरूक तथा सजग रहने का प्रयास करें। यदि आप इस जागरूकता तथा सजगता को कायम रख सकें तो अपने व्यक्तित्व के दूसरे स्तर का दर्शन कर सकेंगे।

आपके व्यक्तित्व का प्रथम स्तर आपका चेतन मन है। यहीं से आप द्वितीय स्तर, जिसे अवचेतन मन कहते हैं, पर उतरते हैं। भारतीय दर्शन में इसे सूक्ष्म शरीर भी कहा गया है। यह सूक्ष्म शरीर संस्कारों, स्मृतियों और पूर्वजन्म की अनेक बातों का भण्डारगृह है। अतएव जब आप व्यक्तित्व के दूसरे स्तर पर उतरते हैं तो आपको अनेक विचित्र बातें तथा अपने व्यक्तित्व की खामियाँ, कुण्ठाएँ एवं मनोग्रन्थियाँ दिखाई पड़ती हैं।

यह कुछ ऐसा ही है जैसे आप अपने घर के कबाड़खाने में घुसते हैं और एक-एक करके अनुपयोगी वस्तुओं को बाहर निकाल फेंकते हैं। जब तक आप अपने व्यक्तित्व रूपी भवन के दूसरे तल में प्रवेश की क्षमता प्राप्त नहीं कर लेते, आपके लिये यह जानना तथा समझना कि आपके व्यक्तित्व में कौन-सी त्रुटियाँ अथवा अवांछनीय बातें हैं, प्रायः असंभव है। मनोवैज्ञानिकों को यह बात अच्छी तरह समझनी चाहिए कि जब तक कारण का पूर्ण ज्ञान नहीं हो जाता उसे हटाना सम्भव नहीं।

योग द्वारा दुःख तथा तनाव के कारण को पूर्णरूपेण दूर किया जाता है। योग इससे भी अधिक गहराई में जाता है, परन्तु वह अभी मेरी चर्चा का विषय नहीं। अभी आपके लिए मेरा मात्र यही संदेश है कि योग की प्रेरणा तथा विचार आप के लिए सहायक हों, आपको इस योग विज्ञान के गहन अध्ययन तथा अभ्यास के लिये प्रेरित करें। यदि हो सके तो योग की वैज्ञानिक संभावनाओं की जाँच तथा चर्चा के लिये एक समिति गठित कर लीजिए।

– 25 मई 1968, हवाई विश्वविद्यालय, होनोलूलू

श्रीराम और कुण्डलिनी जागरण

भारत में हर वर्ष रामलीला का उत्सव मनाया जाता है। हमलोगों के लिए श्रीराम एक राजा के पुत्र होने के अलावा सृष्टि के कण-कण में व्याप्त सार्वभौम-चेतना एवं दृश्य और अदृश्यमान जगत् के रचनात्मक सिद्धान्त के प्रतीक हैं। श्रीराम हमारे लिए इस दृष्टिगोचर जगत् की वास्तविकता ही नहीं बल्कि अव्यक्त वास्तविकता के भी प्रतीक हैं। हजारों सालों से यह महान् व्यक्तित्व लाखों-करोड़ों हिन्दुओं का प्रेरणा स्रोत रहा है। योगियों की दृष्टि में श्रीराम चैतन्य स्वरूप हैं एवं सम्पूर्ण रामलीला अपने अन्दर सर्वोच्च ज्ञान की खोज का प्रतीक है। यह केवल एक राजपुत्र का एक राजकन्या से विवाह, उनके वनवास एवं राक्षसराज रावण को विनष्ट करने की कथा नहीं है, बल्कि इसका सार तत्त्व कुछ और ही है।

प्रत्येक व्यक्ति के अंदर रामलीला का यह खेल चल रहा है। मनुष्य की व्यष्टि चेतना ब्रह्माण्ड की सर्वोच्च शक्ति से युक्त होने के लिए सतत सचेष्ट है, प्रयत्नशील है। मनुष्य के जीवन में कुण्डलिनी का जागरण एवं उससे उत्पन्न अनुभव सबसे महत्त्वपूर्ण है। किसी वस्तु के ज्ञान से ज्यादा उसका अनुभव महत्त्व रखता है। अनुभव की एक किरण आपको चेतना के उच्चतर प्रदेश में पहुँचा देगी, किन्तु केवल कोरा ज्ञान किसी भी विशिष्ट प्रदेश में आपको नहीं ले जा सकेगा। आप जहाँ हैं वहीं रुके रहेंगे। जो व्यक्ति उच्च अनुभव प्राप्त करना चाहता है, उसे अवश्य ही इन्द्रिय जगत् से अपने सभी संबंधों का विच्छेद करना होगा। शरीर में पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ एवं पाँच कर्मेन्द्रियाँ, कुल मिलाकर दस इन्द्रियाँ राक्षसराज रावण के दस सिरों की प्रतीक हैं।

प्रत्येक इन्द्रिय की दो वृत्तियाँ होती हैं, सकारात्मक और नकारात्मक। इस प्रकार कुल बीस वृत्तियाँ हुयीं और ये बीस वृत्तियाँ रावण की बीस भुजाओं की प्रतीक हैं जिन्हें आप रामलीला में देखते हैं। जब राम-रावण युद्ध चल रहा था और श्रीराम रावण पर प्रहार करते थे तब प्रत्येक बार रावण का सिर कटकर गिर जाता था, किन्तु पुनः उसकी पूर्ति हो जाती थी। तत्पश्चात् यह ज्ञात हुआ कि रावण का अंत करने के लिए उसकी नाभि में स्थित अमृत को नष्ट करना आवश्यक है, और इस प्रकार राक्षसराज रावण का अंत हुआ।

जब कुण्डलिनी का जागरण होता है तो बहुत-सी चीजें घटित हो सकती हैं। यह केवल मानसिक अनुभूति नहीं है जिसका अनुभव हम कभी-कभी करते

हैं। यह भ्रान्ति भी नहीं है बल्कि यह वैसा अनुभव है जो मनुष्य की सम्पूर्ण चेतना को पूर्णतः परिवर्तित करने तथा उसे अपने अंदर विद्यमान अदृश्य, सूक्ष्म शक्तियों को देखने की सम्पूर्ण क्षमता प्रदान करने के लिए उत्तरदायी है। इसलिए सुषुम्ना मार्ग से होकर सहस्रार चक्र तक कुण्डलिनी की सम्पूर्ण यात्रा वास्तव में श्रीराम की लीला है।

भारतवर्ष में श्रीराम की गाथा रात-दिन गाई जाती है। यद्यपि हमारे लिए वे भगवान हैं, किन्तु इससे भी अधिक, वे हमारे प्रेरणा के अविच्छिन्न स्रोत भी हैं क्योंकि राक्षसराज रावण की कैद से सीता को छुड़ाने के लिए उन्होंने जो कठोर श्रम किया, वैसा उदाहरण विरले ही मिलता है। आज आपका रामलीला उत्सव है, यह बहुत अच्छा है। इस गाथा को पढ़ने के लिए थोड़ा समय निकालिये। ऋषि वाल्मीकि ने राम की कथा को लिखा है। इस संदर्भ में अन्य ग्रन्थ है अध्यात्म रामायण, तथा एक तीसरी कथा रामचरितमानस है जिसमें श्रीराम के गुह्य जीवन का वर्णन है। सभी आध्यात्मिक जिज्ञासुओं के लिए रामलीला के अर्थ को अच्छी तरह से समझना अत्यन्त आवश्यक है।

लगभग दो दशकों से मैं योग पर चर्चा करता आ रहा हूँ। मैं किसी विशिष्ट योग परम्परा से सम्बन्ध नहीं रखता हूँ। योग मेरी परम्परा नहीं है, बल्कि मेरी परम्परा वेदान्त है। किन्तु मैंने पाया है कि मजबूत नींव के बिना आप भव्य इमारत नहीं खड़ी कर सकते। यदि इड़ा और पिंगला का आपस में समन्वय नहीं हो, यदि चक्रों का जागरण नहीं हो, यदि सुषुम्ना को योगाभ्यासों द्वारा जाग्रत नहीं किया जाये और यदि कुण्डलिनी जाग्रत नहीं हो पाती है तो मानव

शरीर में रहते हुए भी आपकी चेतना पशुतुल्य ही रहती है। चाहे आप कितने बड़े विद्वान् ही क्यों न हों, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। चाहे आप किसी भी विषय पर बोलें, वेदान्त के बारे में, भक्ति के बारे में, राजयोग के बारे में अथवा भगवद्गीता के बारे में, इससे कोई लाभ नहीं होगा। एक टेप रिकॉर्डर भी आपके समान शब्दों को दुहरा सकता है।

आपके अन्दर का अनुभव इन सब के परे है और वही अनुभव सर्वोच्च वास्तविकता है। यह कोई कल्पना नहीं, बल्कि यह मन के तत्त्वों का, उसके स्वभाव का, उसके स्वरूप का, पूर्ण रूप से निर्माण करना है। आप इस कमरे की रोशनी को कैसे देखते हैं? अपनी चेतना के द्वारा, जो वृत्ति कहलाती है। इसी प्रकार आप अपने अन्दर की अनुभूति भी प्राप्त कर सकते हैं। स्थूल मन का रूपान्तरण किया जा सकता है और इस अनुभव के साथ वास्तविकता की खोज के लिए आप अग्रसर हो सकते हैं। किसी भी वस्तु को पाने के लिए, बल्कि कहा जाए तो 'सत्य' की खोज के लिए भी आप अग्रसर हो सकते हैं।

योग पर चर्चा करना मुझे महत्त्वपूर्ण जान पड़ा, इसलिये मैंने इसकी चर्चा की, और अब मुझे यह ज्ञात हो रहा है कि लोग इसे समझते हैं। यहाँ आप रामलीला में चौपाइयाँ गायेंगे, परन्तु मैं इसे द्रष्टाभाव से देखने का मार्ग बतला सकता हूँ। नित्य सुबह पद्मासन, सिद्धासन या वज्रासन में, चिन्मुद्रा या ज्ञान मुद्रा के साथ आँखें बन्द करके बैठ जायें। शरीर की सभी गतिविधियों को बन्द कर दें और किसी एक मंत्र पर अपने मन को एकाग्र करें। मंत्र कोई भी हो सकता है, चाहे ॐ या राम, या अन्य मंत्र, जो आपके गुरु ने आपको दिया हो। नित्य बैठकर मंत्र जप का अभ्यास करें और इस प्रकार आप राम की चेतना को अपने अन्दर जाग्रत कर सकते हैं। यह राम की चेतना सुषुम्ना मार्ग से होकर मूलाधार से सहस्रार तक जाती है।

स्वामी राममूर्ति जी द्वारा इस रामलीला उत्सव में भाग लेने का अवसर देने पर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। और 28 वर्ष के पश्चात् मैं अपने गुरु भाई, स्वामी नादब्रह्मानन्द जी से मिला हूँ। बहुत समय से मैं उनसे मिलना चाहता था। मैं यहाँ कुछ घंटे ही रुकूँगा, मैं बहुत कम समय के लिये आपके देश में आया हूँ, परन्तु आशा करता हूँ कि मैं दुबारा इस आश्रम के शांत वातावरण में रहने के लिए कभी आऊँगा। अभी मैं इससे अधिक तो नहीं कहूँगा, किन्तु मैं चाहता हूँ कि आप लोग व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करने का स्वयं प्रयत्न करें।

– 26 अगस्त 1982, आनन्द आश्रम, मोनरो, न्यूयॉर्क

यौगिक जीवन द्वारा मुक्ति

हम अपने लिए चाहे कोई भी मार्ग अपनायें, उससे कुछ पाने की आशा अवश्य करते हैं। हम अपने लिए चाहे नैतिक जीवन चुनें या धार्मिक जीवन या फिर एक घुमक्कड़ का जीवन, किन्तु एक बात स्पष्ट है कि प्रत्येक व्यक्ति को यह समझना होगा कि उसने अपने लिए इस विशिष्ट जीवनशैली को क्यों चुना। इस संदर्भ में मैं आपको यह बतलाना चाहूँगा कि पूर्व और पश्चिम के बहुत-से लोगों ने एक नयी जीवनशैली को अपना लिया है, और वह है 'यौगिक जीवन पद्धति।' इस पर चर्चा करना तथा इसका स्पष्टीकरण आवश्यक है।

यदि आपने यौगिक जीवन पद्धति को अपना लिया है तो इसका यह अर्थ नहीं कि आपने किसी नए धर्म को स्वीकार कर लिया है, अथवा रातों-रात आप कट्टरपंथी बन गये हैं या अपने बाह्य जीवन को बदल दिया है। हम अपने लिए एक विशेष प्रकार की जीवनशैली को क्यों अपनाना चाहते हैं? क्या इसलिए कि हम इसे अपने व्यक्तित्व में आवश्यक परिवर्तन के रूप में स्वीकारते हैं अथवा धर्म की तरह इसे अपनाते हैं, अथवा क्या हम यह मानते हैं कि इस प्रकार का जीवन अपनाकर हम अपनी चेतना की अभिव्यक्ति कहीं अधिक सुन्दर ढंग से कर सकेंगे?

कभी-कभी हम अपने जीवन के गंभीर क्षणों में देश, काल एवं सृष्टि से अपने संबंधों पर विचार करने लग जाते हैं जो स्वाभाविक है, किन्तु पशु ऐसा नहीं कर पाते। ऐसी अवस्था में हम यह ढूँढने का प्रयास करते हैं कि क्या शरीर के अन्दर कोई महान् और उच्च चेतना विद्यमान है जिसे हमें प्राप्त करना है, जिसे हमें अभिव्यक्त करना है। जीवन की वह पद्धति जिसको हम अभी तक अपनाए हुए हैं, इस गहरी और मूलभूत चेतना को ढूँढ़ने में सहायक सिद्ध नहीं हो सकी है। प्रत्येक व्यक्ति को इसका बोध होता है, परन्तु केवल बोध स्वयं में पर्याप्त नहीं होता, इसके लिए गहरे अनुभव की आवश्यकता होती है। उस गहन अनुभव को प्राप्त करने के लिए आपको अपने जीवन से सम्बन्धित बहुत-सी वस्तुओं को व्यवस्थित करना पड़ेगा तथा इस संदर्भ में यौगिक जीवन पद्धति को समझना पड़ेगा।

योग क्या है? पहले लोगों की मान्यताएँ थीं कि योग एक प्रकार का रहस्यवादी सम्प्रदाय अथवा गुह्य विद्या का एक अंग है, इस लोक की

अपेक्षा परलोक में आने वाली कोई चीज है, अथवा कोई जादू-टोना है या अलौकिक वस्तुओं से सम्बन्ध रखता है। इन सभी स्पष्टीकरणों को मैं नकारना नहीं चाहता, किन्तु वास्तव में जब आप योग के मौलिक ग्रन्थों का अध्ययन करेंगे तब आपको पता चलेगा कि योग दर्शन, सिद्धान्त और अभ्यास का मूल उद्देश्य मानव जीवन के क्रम-विकास की प्रक्रिया में तीव्रता लाना है। जैसा कि अक्सर विद्वानों द्वारा बतलाया जाता है, योग का अर्थ त्याग या जीवन मूल्यों को नकारना नहीं है।

योग की शाखाएँ

हम हठयोग, राजयोग, भक्तियोग, कर्मयोग, ज्ञानयोग, क्रियायोग, कुण्डलिनी योग, लययोग, जपयोग एवं कुछ अन्य योगों के बारे में जानते हैं, किन्तु इनमें से चार प्रमुख हैं – कर्मयोग, भक्तियोग, राजयोग एवं ज्ञानयोग। इन चारों योगों का विकास व्यक्ति की प्रवृत्तियों एवं उसकी मानसिक क्षमता को दृष्टि में रखते हुए किया गया है। जो स्वभाव से क्रियाशील हैं उनके लिए कर्मयोग उपयुक्त हैं, जो भावुक प्रवृत्ति के हैं उनके लिए भक्तियोग, आत्मिक प्रवृत्ति वालों के लिए राजयोग एवं बौद्धिक प्रवृत्ति वाले लोगों के लिए ज्ञानयोग का मार्ग उचित है। परन्तु इन सभी योगों का समन्वित अभ्यास करना अधिक उचित होगा, क्योंकि

आप इन सभी गुणों के मिश्रण हैं। हो सकता है इन चारों गुणों में से किसी एक गुण की प्रधानता आप में हो, हो सकता है आप में बुद्धि की प्रधानता हो, परन्तु आप यह नहीं कह सकते कि मुझमें आत्मिक, भावनात्मक एवं क्रियात्मक गुण कतई नहीं हैं। आप में भावनाओं की प्रधानता हो सकती है किन्तु आप स्वयं में आत्मिक, बौद्धिक एवं गतिशीलता के गुणों की उपस्थिति को नकार नहीं सकते। अतः समन्वित योग का अभ्यास ही जीवन में बेहतर होगा।

हठयोग के सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं हठयोग प्रदीपिका, गोरक्ष संहिता एवं घेरण्ड संहिता। राजयोग का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है पातंजल योग सूत्र। यदि आप योग के इन मूल ग्रन्थों का अध्ययन करें तो योग के लक्ष्य और उसके मूल उद्देश्य के बारे में महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष पर पहुँचेंगे। हम योग का अभ्यास क्यों करते हैं? क्या इसलिए कि हम सांसारिक जीवन के अनुभवों को नकारना चाहते हैं या इसलिए कि हम मानव चेतना की सीमाओं के बारे में जान गये हैं जो पूर्णतः इन्द्रियों एवं इन्द्रियानुभूतियों पर ही निर्भर हैं? तत्पश्चात् हम स्वयं से प्रश्न करते हैं कि क्या मनुष्य की निम्न शक्तियों एवं इन्द्रियों के बिना भी उन अनुभवों को प्राप्त किया जा सकता है? और यहीं पर योग आपकी सहायता करता है।

स्वयं को मुक्त करो

यौगिक जीवन पद्धति से धार्मिक जीवन पद्धति की तुलना नहीं करनी चाहिये – मद्यपान निषेध, मांसभक्षण निषेध या यह मत करो वह मत करो। इन तमाम निषेधाज्ञाओं से यौगिक जीवन पद्धति का कोई सरोकार नहीं है। कभी-कभी ये निषेधाज्ञाएँ लोगों की मानसिक बीमारियों के उपचार में तथा उनकी आदतों को सुधारने में बहुत कारगर सिद्ध होती हैं, किन्तु यौगिक जीवन पद्धति का धार्मिक जीवन पद्धति एवं उसके कट्टरवादी प्रतिबंधों इत्यादि से कोई सम्बन्ध नहीं है।

इस संदर्भ में योग का पक्ष बहुत स्पष्ट है। यदि आप अपने मन को रूपान्तरित कर लें, यदि आप अपनी सामान्य चेतना की सजगता को पार कर जाते हैं, तो आपकी लतें छूट जायेंगी और आपकी आसक्तियाँ समुचित ढंग से मर्यादित हो जायेंगी। इसलिए गुरु या योग शिक्षक के लिए किसी शिष्य को यह बतलाना आवश्यक नहीं कि यह मत करो, वह मत करो इत्यादि। एक बार जब आपकी चेतना की बेड़ियाँ खुल जाती हैं, उसकी सीमाओं को हटा दिया जाता है तब आपकी चेतना बहुत ऊँची उठ जाती है और तब बाह्य जीवन आपके लिए महत्त्वहीन हो जाता है।

अनेक बार लोग मुझसे यौगिक जीवन पद्धति पर रूढ़िवादी ढंग से चर्चा करने का आग्रह करते हैं। आखिर योग है क्या? यह कोई धर्म नहीं है बल्कि यह धर्म से बहुत दूर है। मैं धर्म की आलोचना नहीं कर रहा हूँ, किन्तु यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि धर्म और योग, दो बिल्कुल अलग चीजें हैं। यह एक अलग बात है कि आप धर्मनिष्ठ होते हुए भी योग का अभ्यास करते हैं, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि धर्म और योग दोनों एक ही वस्तु हैं।

धर्म में जहाँ आपके समक्ष एक सम्प्रदाय है, एक विश्वास है, एक लक्ष्य है जिसके प्रति आपकी श्रद्धा है, वहीं योग का उद्देश्य है चेतना को असीम बनाना, निर्बाध बनाना, मुक्त करना एवं नाम और रूप के परे जाना। महर्षि पतंजलि ने अपने योग सूत्रों में सर्वप्रथम कहा है – *योग: चित्तवृद्धिनिरोध:,* अपनी चेतना के सम्पूर्ण क्रियाकलापों पर नियंत्रण पा लेना ही योग है।

अतः योग का अनुभव प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्तियों को बहुत-से नियमों एवं प्रतिबंधों, जैसे भोजन, नींद, सहवास या सामाजिक कार्यों पर प्रतिबंध में उलझे रहने की बजाय अभ्यासों पर अधिक ध्यान देना चाहिये, क्योंकि ये प्रतिबंध एक प्रकार के नकारात्मक तत्त्व को मस्तिष्क प्रदेश में प्रविष्ट करा देंगे जो आपके अनुभवों में बाधा उत्पन्न करेंगे।

यह स्मरण रखिये कि प्रत्येक निषेध, प्रत्येक दमन, प्रत्येक मत तथा प्रत्येक विश्वास आपके लिए एक अनुभव बन जाता है और आपके अन्य सम्भावित अनुभवों को अवरुद्ध करने का कारण बन जाता है। योग के उच्च अभ्यासों में आपके आन्तरिक अनुभव आपके व्यक्तिगत दर्शन और व्यक्तिगत दृष्टिकोण से प्रभावित होते हैं। इसलिए यदि आप केवल अभ्यासों पर ही अपना पूरा ध्यान देते हैं तो आपके अनुभवों में कोई अशुद्धि नहीं आ पायेगी।

हठयोग

उदाहरण के लिए हठयोग को लीजिये। हठयोग की तकनीकें स्वचालित तंत्रिका तंत्र को संतुलित करती हैं, जो योगाभ्यासों की आधारशिला एवं मूल स्रोत हैं। जब आप अपने शरीर में अनुकम्पी और परानुकम्पी तंत्रिका तंत्र में सन्तुलन स्थापित करने में सक्षम हो जाते हैं और जब आपके संस्थान में इन दोनों शक्तियों का प्रवाह नियमित और समन्वित हो जाता है तब आपका मानसिक स्तर स्वतः उन्नत हो जाता है। परन्तु जब अनुकम्पी और परानुकम्पी स्नायु संस्थानों के आपसी सम्बन्धों में विघ्न उत्पन्न हो जाता है और इनमें

असन्तुलन पैदा हो जाता है तो आपकी चेतना विशुद्ध नहीं रहेगी, यथार्थ नहीं रहेगी, भले ही आप सर्वोत्तम भोजन ही क्यों न ग्रहण करते हों, भले ही आप धर्मनिष्ठ जीवन ही क्यों न व्यतीत कर रहे हों। यदि आपके स्नायु संस्थान परस्पर असन्तुलित हैं, तो आप दयावान हों, या दानवीर हों, या परोपकार एवं प्रेम में समर्पित हो गये हों, या ईमानदार व्यक्ति ही क्यों न हों, आपको दुःख, नैराश्य, हताशा इत्यादि का अनुभव एक सामान्य व्यक्ति की तरह ही होगा।

एक भद्र व्यक्ति होना ही आपके लिए पर्याप्त नहीं है। आपको एक पूर्ण सन्तुलित व्यक्ति बनना होगा; केवल दर्शन और सिद्धान्त के क्षेत्र में ही सन्तुलन नहीं, बल्कि उन प्रक्रियाओं में भी सन्तुलन आवश्यक है जो आपके सामान्य जीवन के क्रियाकलापों के लिए उत्तरदायी हैं। मन और शरीर ऐसे संस्थान हैं जो आपके अभिन्न अंग हैं, केवल संतुलित दर्शन का सृजन कर लेना ही पर्याप्त नहीं है। अच्छे दार्शनिक भावों का आप में समावेश होना भी अच्छा है। एक अच्छे मन का होना अच्छा है, दूसरों के प्रति आपके अच्छे व्यवहार का होना भी अच्छा है, किन्तु अपनी मूल प्रकृति के प्रदेश में, जो आपके जीवन के लिए उत्तरदायी है, सन्तुलन लाना अधिक आवश्यक है। आपने जीवन का सृजन नहीं किया, आप नहीं जानते कि आपके साथ क्या घटित हो रहा है, आप नहीं जानते कि आप किस प्रकार सोचते हैं, आप नहीं जानते कि शारीरिक और मानसिक शक्तियों तथा आपके जीवन सिद्धान्तों में किस प्रकार संयोग और वियोग चल रहा है। इसके लिए एक प्राकृतिक नियम है और वह प्राकृतिक नियम बहुत ही विज्ञान-सम्मत है।

योगियों ने जीवन के नियम को, चेतना और पदार्थ के बीच आपसी सम्बन्धों को, पुरुष और प्रकृति के सम्बन्धों को सूक्ष्म रूप से पहचाना है। यदि आप तंत्र के ग्रंथों का अध्ययन करेंगे तो उसमें आपको शिव और शक्ति का उल्लेख मिलेगा। यदि आप सांख्य दर्शन का अध्ययन करेंगे तो उसमें पुरुष और प्रकृति का उल्लेख मिलेगा जो चेतना और पदार्थ के द्योतक हैं। चेतना और पदार्थ का आपसी सम्बन्ध आपके अनुभवों की अभिव्यक्ति के लिए उत्तरदायी है। आप प्रसन्न हैं या नहीं, आप हताश हो गये हैं या नहीं, यह सब पदार्थ और आपके जीवन के चेतन सिद्धान्त के आपसी सम्बन्धों पर निर्भर करता है। इन दोनों सिद्धान्तों को हठयोग के द्वारा व्यवस्थित कर सकते हैं। हठयोग का मतलब होता है 'ह' और 'ठ', यानि सूर्य और चन्द्र में सन्तुलन अथवा पदार्थ और चेतना में सन्तुलन या अनुकम्पी और परानुकम्पी स्नायु तंत्र में सन्तुलन।

प्राणायाम

अब हम प्राणायाम के बारे में चर्चा करेंगे। आपने कुछ पुस्तकों का अध्ययन किया होगा जिनमें ऐसे उल्लेख मिलते हैं – 'जब आप प्राणायाम करते हैं तब आप अधिक ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं तथा अधिक कार्बन डायऑक्साइड बाहर निकालते हैं, इससे आप लाभान्वित होते हैं।' किन्तु यह प्राणायाम की बहुत साधारण व्याख्या है। प्राणायाम में आप अधिक ऑक्सीजन लेते हैं, किन्तु आप अपने शरीर में अन्ततः ऑक्सीजन की मात्रा में वृद्धि नहीं कर सकते, यह वैज्ञानिक ढंग से प्रमाणित किया जा चुका है। प्राणायाम का सम्बन्ध मस्तिष्क के दोनों गोलार्द्धों के बीच क्रिया-प्रतिक्रिया से है।

जब मैंने योग का अध्ययन और अभ्यास शुरू किया तो मुझे प्राणायाम को श्वास-प्रश्वास की क्रिया के रूप में सिखलाया गया। आज लगभग 42 वर्षों के अभ्यास के पश्चात् तथा सारे संसार में हो रहे वैज्ञानिक प्रयोगों के परिणामों को दृष्टि में रखते हुए मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि प्राणायाम और श्वास-प्रश्वास की क्रिया, दो अलग-अलग क्रियाएँ हैं। अब यह जानना है कि प्राणायाम कैसे करें। पद्मासन या सिद्धासन जैसे किसी आसन में बैठ जाइये। कभी-कभी ऐसा भी कहा जाता है कि प्राणायाम कुर्सी पर बैठकर भी किया जा सकता है, लेकिन वह श्वसन-क्रिया ही होगी, प्राणायाम नहीं होगा।

आप आँखें बन्द करके किसी एक आसन में बैठ जाइये, बायें नासिका छिद्र से श्वास लीजिये और दायें से छोड़ दीजिये। फिर इसका उलटा कीजिये और एकान्तर क्रम से लगातार करते जाइए। जब आप ऐसा करते हैं तो आपके अन्दर ऑक्सीजन और कार्बन डायऑक्साइड लेने और छोड़ने की क्रिया के साथ-साथ कुछ अन्य क्रियाएँ भी होती रहती हैं। वास्तव में प्रत्येक अन्दर जाने वाली श्वास के द्वारा आपके मस्तिष्क के एक गोलार्द्ध में गतिविधि होती है। जब आप अपनी बायीं नासिका से श्वास लेते हैं तब आप अपने मस्तिष्क के दायें गोलार्द्ध से सम्बन्ध स्थापित करते हैं और जब आप दायीं नासिका से श्वास लेते हैं तब आप अपने मस्तिष्क के बायें गोलार्द्ध को प्रभावित करते हैं। इस प्रकार श्वसन की इस तकनीक से सजगता की गुणवत्ता प्रभावित होती है।

इस तरह शरीर में ऊपर से नीचे तक पाँच प्राणों में सन्तुलन स्थापित हो जाता है। पंचप्राण अर्थात् प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान शरीर में हो रही पाँच प्रकार की मुख्य गतिविधियों के लिए उत्तरदायी हैं। इसके परिणामस्वरूप मस्तिष्क के दोनों गोलार्द्धों में सन्तुलन आता है और इस तरह

आन्तरिक चेतना में वृद्धि होती है। आप अपने आंतरिक अस्तित्व के प्रति सचेत हो जाते हैं, जिसका उद्देश्य होता है मुक्ति।

मुक्ति क्या है?

शारीरिक अभ्यासों के द्वारा चेतना के आयाम में उन्नति करने के लिए हठयोग और प्राणायाम दो उदाहरण मात्र हैं। अतः जो लोग योग को अपनी जीवन पद्धति बनाना चाहते हैं, उन्हें इस बात के प्रति सतर्क रहना चाहिये कि वे योग को एक अन्य धर्म का रूप न दे दें, क्योंकि योग का मूल उद्देश्य व्यक्ति को उसकी सीमाओं से मुक्त करना है। यदि आप यौगिक जीवन पद्धति का गलत अर्थ लगा लेंगे तो आप एक बन्धन से दूसरे बन्धन में फँस जायेंगे, और किसी भी प्रकार का बन्धन, चाहे वह यौगिक हो या धार्मिक, आपको मुक्त होने में सहायता नहीं करेगा।

जब मैं मुक्ति शब्द का प्रयोग करता हूँ तो मेरे लिए इसका अर्थ क्या होता है, इसे मुझे स्पष्ट कर देना चाहिए। तंत्र दर्शन में मुक्ति की व्याख्या की गई है – 'जब मन अपनी निर्धारित सीमाओं और लक्ष्य के परे कार्य कर सके, जब मन अपनी सामान्य सीमाओं के परे विचार कर सके, देख सके, और समझ सके, तब मानव शरीर में, मानव मन में और आपके अस्तित्व में कहीं भी स्थित पदार्थ एवं चेतना के दो तत्त्व अलग हो जाते हैं। शरीर में इन दो तत्त्वों के पृथक् होने की विधि को ही मुक्ति कहते हैं।' उदाहरण के लिए, आप दूध में से मक्खन को अलग करते हैं, यही मुक्ति है। इसी प्रकार पदार्थ से ऊर्जा को

विलग करना ही मुक्ति है। मुक्ति को धार्मिक परिप्रेक्ष्य में नहीं समझना चाहिये। इसे पूर्णतः वैज्ञानिक ढंग से समझना चाहिये।

पदार्थ कभी भी समांगी नहीं होता। कोई भी वस्तु समांगी नहीं है। शरीर भी समांगी नहीं है। यह भी विभिन्न तत्त्वों के समन्वय से बना है। स्वयं जीवन भी दो तत्त्वों के समन्वय से बना है, पदार्थ और चेतना। ये साथ-साथ रहते हैं। पदार्थ चेतना के साथ पूर्णतया युक्त हो जाता है और इसी को सृष्टि कहते हैं। योग के अभ्यास से आपको इन्हें अलग-अलग करना होगा। ध्यानयोग, क्रियायोग, राजयोग, भक्तियोग या किसी अन्य प्रकार के अभ्यास के द्वारा इन दोनों तत्त्वों को अलग-अलग करना होगा। इस पृथक्करण को ही मुक्ति कहते हैं और यदि योग के अभ्यासों में आप निष्ठापूर्वक रत रहें तो यह संभव है।

सावधानी से चयन करें

केवल हठयोग, कर्मयोग या किसी अन्य प्रकार का एक अभ्यास ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि अभ्यासों के बीच संतुलन होना अधिक महत्त्वपूर्ण है। कुछ लोग भक्तियोग पर जोर देते हैं – 'भक्तियोग महान् है। इसके समान दुनिया में कोई दूसरा योग है ही नहीं।' कुछ अन्य लोगों का कहना है, 'मैं ध्यान नहीं करता, थोड़े-से आसन-प्राणायाम करता हूँ, बस, इतना ही काफी है।' इस तरह का अतिशय मूल्यांकन नहीं होना चाहिये। आप कौन-सा योग करते हैं यह महत्त्वपूर्ण नहीं है, पर कौन-सा योग आपके लिए उपयुक्त है, यह महत्त्वपूर्ण है।

यदि आप अपने मन की वृत्तियों को संभाल सकने में समर्थ हैं तो आप ज्ञानयोग या राजयोग का अभ्यास आसानी से कर सकते हैं। परन्तु यदि आप अपने मन की वृत्तियों को संभाल सकने में असमर्थ हैं, यदि किसी वस्तु पर आप एकाग्र होने की कोशिश करते हैं और एकाएक आप भूल जाते हैं कि आप कहाँ थे, जब आप बहुत प्रयत्न के बाद भी अपने मन को एक वस्तु पर टिकाकर नहीं रख सकते, तब आपको सावधानी के साथ अपने लिए उपयुक्त श्रेणी के योग का चयन करना चाहिये।

एक विशेष प्रकार का योग आपको पसंद है, यह बात उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है। यह कहने का कोई तात्पर्य नहीं है कि 'मैंने राजयोग पर बहुत सारे साहित्य का अध्ययन किया है, मैं इससे बहुत प्रभावित हुआ हूँ' या 'मेरी राय में कर्मयोग बहुत अच्छा योग है।' नहीं, कर्मयोग नहीं, भक्तियोग भी नहीं, जो आपके लिए उपयुक्त है, वही योग सबसे अच्छा है। एक विशेष रोग के लिए

एक विशेष औषधि की आवश्यकता होती है। योग के साथ भी यही होता है। यदि आपका मन एकाग्र है, यदि आपका मन विक्षिप्त है, यदि आपका मन उद्विग्न है, यदि आपका मन हताश हो गया है तब आपको क्रमशः उसी प्रकार के योग की आवश्यकता होगी जिससे आप ठीक हो जायें। इसलिए अभ्यास आरम्भ करने के पूर्व आप यह निर्धारित करें कि आप किस श्रेणी में आते हैं। योग में सिखाया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति की चेतना मुख्यतः पाँच में से किसी एक प्रकार की हो सकती है – जड़ चेतना (मूढ़), बिखरी हुई चेतना (क्षिप्त), अस्थिर चेतना (विक्षिप्त), एकाग्र चेतना और नियंत्रित चेतना (निरुद्ध)। आपकी चेतना किस प्रकार की है, उसी के अनुसार अपने लिए योग के अभ्यासों का चयन करें।

मैं कभी नहीं कहता कि हर व्यक्ति को किसी भी तरह का योग करना चाहिये, यथा हठयोग, ध्यानयोग आदि क्योंकि ऐसा करना कुछ व्यक्तियों के लिए उचित नहीं भी हो सकता है। उदाहरण के लिए, अनेक बार मैंने वैज्ञानिक प्रयोगों के माध्यम से देखा है कि जब कोई विशेष साधक ध्यान करता है तो उसकी हृदय गति तथा रक्तचाप काफी निम्न हो जाते हैं तथा उससे शरीर का आन्तरिक तापमान भी कम हो जाता है। मैं नहीं कहता कि ध्यान एक नकारात्मक वस्तु है। ध्यान करने में कोई दोष नहीं है, किन्तु उपर्युक्त अवस्था में ध्यान का प्रभाव नकारात्मक है। यदि वह ध्यान का अभ्यास लगातार करता रहा तो वह अधिक क्रोधी, अधिक असहिष्णु, चिड़चिड़ा हो जायेगा और कभी-कभी इससे एक अपराधी मन का विकास भी हो जाता है। ऐसा इसलिए नहीं होता है कि इस प्रकार का योग बुरा है, बल्कि इसलिए कि उसने अपने लिए उपयुक्त योग का चयन नहीं किया।

पुस्तकों को पढ़कर, लेखक की व्याख्या कर सकने की क्षमता के अनुसार आपको कुछ पसंद आ जाता है, परन्तु आपको अपनी समस्याओं, जैसे आपकी शारीरिक समस्या, मानसिक समस्या इत्यादि का भी अध्ययन करना चाहिये। इसलिए जब कभी भी आप यौगिक जीवन पद्धति को अपनायें, सर्वप्रथम आप अपनी समस्याओं का अध्ययन करें, तब अपने लिए उपयुक्त योग का चयन करें। इस प्रकार कर्मयोग गतिशील व्यक्ति के लिए है, भक्तियोग भावुक व्यक्ति के लिए, राजयोग मानसिक प्रवृत्ति वाले लोगों के लिए तथा विवेकी लोगों के लिए ज्ञानयोग है। किन्तु इन सभी योगों का समन्वित अभ्यास सर्वोत्तम है।

– 27 अगस्त 1982, वर्जीनिया विश्वविद्यालय, शार्लोत्स्वेल

तंत्र योग की पद्धतियाँ

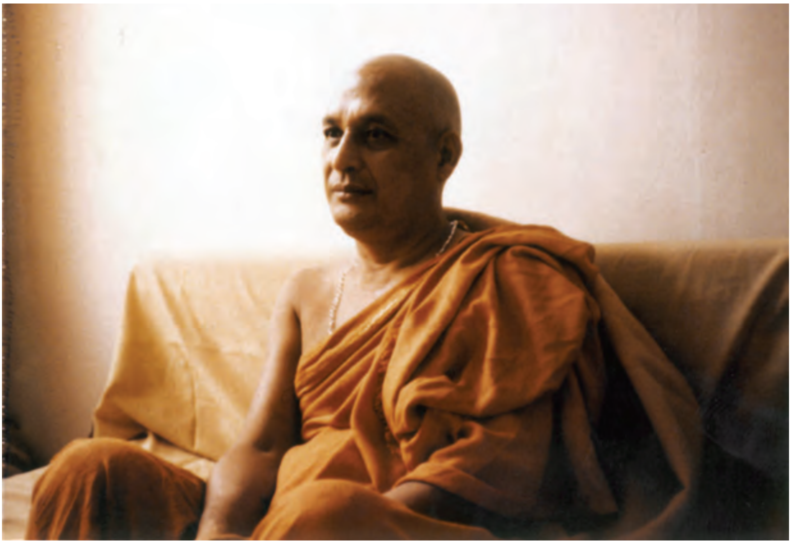

अनुभवों की एक अवस्था होती है जहाँ मन अपनी सीमाओं के परे भी कार्य कर सकता है, जहाँ इन्द्रियाँ और इन्द्रियानुभव बिल्कुल कार्य नहीं करते। यह अवस्था केवल योग और तंत्र के अभ्यास में ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक अभ्यासों में भी मील के पत्थर के सदृश है। इस आकृति के पीछे एक वास्तवकिता निहित है और हमें उस सत्य का अनुभव करना है।

आप अपनी चेतना या मन के स्वरूप में आवश्यक परिवर्तन किये बिना उच्च अनुभवों को प्राप्त नहीं कर सकते। मन बहुधा इन्द्रियों पर आश्रति रहता है, इसलिये यह इन्द्रियों के माध्यम से वस्तु की अनुभूति प्राप्त करता है। इसलिये यह प्रश्न उठता है कि क्या मन इन्द्रियों की सहायता के बिना स्वतंत्र रूप से अनुभव प्राप्त कर सकता है? क्या आप बिना आँखों के देख सकते हैं? क्या आप बिना कानों के सुन सकते हैं? तंत्र इस विषय में सकारात्मक उत्तर देता है। तंत्र शास्त्र का मत है कि इन्द्रियों की सीमाओं के परे वस्तुओं का अनुभव कर पाना सम्भव है बशर्ते कि आप अपनी चेतना के गुण-धर्मों में आवश्यक परिवर्तन कर लें, किन्तु प्रश्न है कि इस परिवर्तन को कैसे लाया जाए? यह योग और तन्त्र शास्त्र की विषय-वस्तु है।

चेतना का विस्तार और मुक्ति

योग के अभ्यास तंत्र के ही अंग हैं। योग और तंत्र भिन्न नहीं हैं, तंत्र शब्द की व्याख्या के अनुसार इसका अर्थ होता है चेतना का विस्तार एवं शक्ति की मुक्ति। तंत्र पद्धति में इसकी महत्त्वपूर्ण विधि है ध्यान, जो राजयोग की सातवीं सीढ़ी है, किन्तु तंत्र में ध्यान को आरम्भ से ही शुरू किया जाता है।

राजयोग में कहा गया है कि जब कभी आपका मन अपने ध्येय से हट जाता है तो उसे आप अपने ध्येय पर पुनः वापस ले आयें, जबकि तंत्र में यह कहा गया है कि आपका मन जहाँ कहीं भी जाता है उसे स्वतंत्र रूप से जाने दें, आप केवल उसका अनुसरण करते रहें। अपने मन के क्रिया-कलापों में हस्तक्षेप न करें। यदि आपके मन में फूल का ख्याल आता है तो उसे देखें, यदि मानव खोपड़ी का विचार आता है तो उसे देखें, यदि आपके मन में एक साँप का विचार आता है तो आप अपने अन्दर साँप को देखें, यदि दुःख और खुशी के विचार हैं तो उन्हें भी देखें। इस प्रकार सभी आन्तरिक विचारों, भावनाओं को साक्षी बनकर देखते जाएँ।

मन के कार्यों में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न नहीं करें, क्योंकि तंत्र शास्त्र में मन को पापी नहीं माना गया है। यह शैतान भी नहीं है। यह दैत्य भी नहीं है। यह सभी प्रकार की शैतानियों का स्रोत भी नहीं है। तंत्र शास्त्र के अनुसार यह मन एक वाहन है, एक साधन है और इसलिये इस साधन का उचित उपयोग आपको करना होगा।

तीन आधार

तंत्र शास्त्र में ध्यान के लिये मन को नियंत्रित करने के तीन आधार हैं – पहला मंत्र, दूसरा यंत्र और तीसरा मण्डल, किन्तु इन्हें मन की एकाग्रता के लिये उपयोग में नहीं लाया जाता है। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है। मंत्र, यंत्र और मण्डल का उपयोग मन को अभिव्यक्त करने के लिये किया जाता है, संस्कारों की शुद्धि के लिये किया जाता है जो अनन्त हैं और प्रायः जीवनपर्यन्त दमित ही रहते हैं। इनका उपयोग अपने पूर्ण मन का दर्शन करने के लिए किया जाता है, मन की निम्न अवस्था, मन की सर्वोच्च अवस्था, मन की अच्छाई और बुराई को जानने के लिए किया जाता है।

मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि मन एक हिमखण्ड के सदृश है। इसका एक अंश तो आप देख सकते हैं, परन्तु शेष अंश नहीं देख सकते। यह कथन

बिल्कुल सत्य है। आप मन की कुछ भावनाओं, कुछ भय इत्यादि को जानते हैं, परन्तु मन के शेष क्रियाकलापों से अनभिज्ञ रहते हैं। अनुभूतियाँ, भावनाएँ, घृणा, स्मृति, प्रेम इत्यादि समग्र मन नहीं है। यह तो उसकी सम्पूर्णता का एक अंश मात्र है। इसलिये हमें अपने संस्कारों को जानना होगा एवं इन संस्कारों को इन्द्रियगोचर बनाना होगा। इन्हें दमित अवस्था में नहीं छोड़ना चाहिए।

यदि आपको कब्ज है तो इस समस्या के निदान के लिये आप जुलाब लेते हैं, थोड़ी तकलीफ जरूर महसूस होती है, परन्तु मल के निकल जाने के पश्चात् आपको आराम का अनुभव होता है। यह मंत्र, यंत्र और मंडल के उद्देश्य के सदृश है। ये मन के उस मल की सफाई करते हैं, जो आन्तरिक दृश्य को देखने में बाधा उत्पन्न करता है, जो मन की विक्षिप्तता, मन के बंधनों, उसकी भ्रान्त धारणाओं, मिथ्या ज्ञान एवं गलत दृष्टिकोण के लिये उत्तरदायी है।

तांत्रिक ध्यान का सबसे सरल उपाय मंत्र है। मंत्र क्या है? मंत्र कोई पवित्र नाम या दिव्य ध्वनि नहीं है। यदि आप ऐसा सोचते हैं तो ठीक है, पर मंत्र का शाब्दिक अर्थ है कि जिस पर ध्यान देने से मन सभी बन्धनों से मुक्त हो जाता है। मंत्र का जप सतत् करना चाहिये। जब आप मंत्र का जप करते हैं तो आपको मन की उद्विग्नता एवं विक्षिप्तता का अधिकाधिक सामना करना पड़ता है और विचारों का जमघट भी दिखाई पड़ता है। उस स्थिति में आप उनको केवल साक्षी भाव से देखते रहें। इससे आपको ज्ञात होगा कि मंत्र चेतना के एक क्षेत्र को शुद्ध करने का साधन है।

यंत्र विशिष्ट ज्यामितीय आकार होते हैं। मेरे पास बहुत-से यंत्र हैं जिन्हें मैं बीस वर्षों से एकत्र करता रहा हूँ। यंत्र मन को प्रभावित करता है, मन इसे ग्रहण करता है और इसे आत्मसात् भी कर लेता है और तब यह मन की आन्तरिक गहराई में शक्तिशाली विस्फोट का साधन बन जाता है। यंत्रों के प्रभावों के कुछ सफल प्रयोग पहले भी किये जा चुके हैं और भविष्य में इनके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

तन्त्र में मंडल मूर्ति या प्रतिमा जैसी आकृति होती है जिस पर लोग एकाग्रता का अभ्यास करते हैं। अनेक धर्म इसे नहीं मानते, लेकिन मैं समझता हूँ कि इन मंडलों का ईश्वर की पूजा से कोई सरोकार नहीं है। वास्तव में जब आप इन मण्डलों के आधार पर अपने मन को केन्द्रित करते हैं तो आपकी चेतना साकार हो जाती है। यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण तथ्य है और यही तांत्रिक ध्यान का उद्देश्य है।

आन्तरिक परिवर्तन

अनेक बार लोग मुझसे कहते हैं कि मुझे बहुत-से अनुभव हो रहे हैं। जब मैं पूछता हूँ, 'तुम्हें क्या हो रहा है?' तो वे कहते हैं, 'मैं जब ध्यान करने बैठता हूँ तो मुझे फूल दिखाई पड़ते हैं, जंगल, पहाड़, नदी, चन्द्रमा इत्यादि दिखलाई पड़ते हैं।' मैं कहता हूँ, 'ठीक है।' तब वे पूछते हैं, 'क्या आप मुझे बतायेंगे कि इसका क्या अर्थ होता है?' मैं कहता हूँ कि इसका कोई अर्थ नहीं होता। इसका अर्थ केवल यह है कि आपकी चेतना में परिवर्तन हो रहा है।

जब यह परिवर्तन हो रहा होता है तो मन के अनुभव वस्तुगत अनुभवों से भिन्न हो जाते हैं। आप उद्यान में एक फूल को देख सकते हैं, यह वस्तुगत

अनुभव है, किन्तु जब आप इसी फूल को अपने अन्दर देख सकेंगे, उतना ही स्पष्ट जितना कि यह उद्यान में था, तो यह चेतना का परिवर्तन है जो आपमें हुआ है। तांत्रिक ध्यान में जब मंत्र, यंत्र और मंडल के द्वारा मन को अविद्या के मैल से परिष्कृत कर लिया जाता है तथा इसकी सीमाएँ भंग हो जाती हैं तब चेतना क्रियाशील हो जाती है और यह क्रियाशील चेतना स्वयं को किसी वस्तु पर प्रक्षेपित कर सकती है। यहाँ पर आपको यह स्मरण रखना होगा कि मैं जब मन और चेतना की चर्चा करता हूँ तो इन्हें मनोवैज्ञानिक वस्तु समझकर नहीं कह रहा हूँ। शक्ति के एक पहलू के रूप में मैं मन और चेतना की चर्चा कर रहा हूँ।

पदार्थ और ऊर्जा का परस्पर रूपान्तरण सम्भव है। जिस प्रकार पदार्थ ऊर्जा है और ऊर्जा पदार्थ है, बस उनकी अभिव्यक्तियाँ भिन्न हैं, उसी प्रकार मन भी एक शक्ति है, किन्तु शरीर और मस्तिष्क से इसका अस्तित्व भिन्न है। मन का अपना अलग अस्तित्व है। इसको साकार किया जा सकता है, इसका अध्यारोपण भी किया जा सकता है, इसे किसी भी रूप में देखा जा सकता है।

सूक्ष्म अनुभूतियाँ

भारत में यह प्रक्रिया दर्शन कहलाती है जिसका अर्थ है देखना। भारत के लोग कहते हैं, 'मैं राम का दर्शन करना चाहता हूँ' या 'मैं अपने गुरु का दर्शन करना चाहता हूँ'। सामान्य रूप से मैं आपको देख सकता हूँ किन्तु देखने की यह विधि भौतिक विधि है, क्योंकि इसके लिये मन को आँखों और पूर्व ज्ञान का आश्रय लेना पड़ता है। कुछ भी देखने के लिए मन को कुछ प्रमाणों पर और कुछ साधनों पर आश्रित रहना पड़ता है। यह स्वतंत्र रूप से आपको नहीं देख सकता, फिर भी इसका इतना विकास करना सम्भव है कि भौगोलिक दूरियों के रहते हुए भी आप मुझे और मैं आपको प्रत्यक्ष रूप से देख सकूँ। यही दर्शन है और यही तांत्रिक ध्यान का अन्तिम उद्देश्य है।

सामान्य ध्यान का उद्देश्य कुछ भी हो सकता है, इसके बारे में मैं अपना कोई मत प्रकट नहीं करता। ध्यान का उद्देश्य मन की शान्ति हो सकती है। हो सकता है आपको रात में नींद न आती हो और मैं कहूँ कि ध्यान कीजिये, तब आपको अच्छी नींद आएगी, या आपको उच्च रक्तचाप हो और मैं आपको ध्यान करने की सलाह दूँ जिससे आपका रक्तचाप नियन्त्रित हो जाय, किन्तु यह ध्यान का अंतिम उद्देश्य नहीं है।

तांत्रिक ध्यान में हम निश्चय ही चेतना के एक महत्त्वपूर्ण पहलू को साकार करने का प्रयास करते हैं जिसे शक्ति कहते हैं। यह प्रत्येक व्यक्ति में सुषुप्त अवस्था में रहती है और इसलिए तंत्र शास्त्र में कहा गया है कि कुण्डलिनी मूलाधार चक्र में सोई हुई है, किन्तु जब तांत्रिक ध्यान करने से कुण्डलिनी जाग्रत हो जाती है तो अनुभूतियों के नये द्वार खुल जाते हैं, तब आप अपने इष्ट देवता, ईश्वर या अपने गुरु को प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं। यही परम साक्षात्कार है, शक्ति की अभिव्यक्ति है एवं तांत्रिक ध्यान का यही उद्देश्य है।

सारांश यही कि जब आप तांत्रिक ध्यान का अभ्यास कर रहे हों तो अपने मन को एक साधन, एक वाहन और अच्छा मित्र समझें। जब आपके मन में किसी प्रकार की उद्विग्नता, चिन्ता, उत्तेजना, उत्कण्ठा, विक्षिप्तता, भय, आतंक इत्यादि आते हैं तो इन्हें मन की विक्षिप्तता मत कहिए, बल्कि विकारों के निष्कासन या शुद्धि की प्रक्रिया समझिये। ऐसा सोचिये कि मैं हल्का हो रहा हूँ, अपने संस्कारों को बाहर निकाल रहा हूँ, इन्हें अवचेतन तथा अचेतन मन के तल से चेतन मन पर ला रहा हूँ और इन भारों से मुक्त हो रहा हूँ।

एकाग्र होने की चेष्टा न करें। आप में से अनेकों लोगों के लिये यह बहुत कठिन होगा जिन्हें एकाग्रता के आधार पर दशकों तक योग सिखाया गया है। आपके पूर्व निर्धारित कार्यक्रम को परिवर्तित करना बड़ा मुश्किल है, किन्तु यदि आप एकाग्रता नहीं करेंगे तो क्या करेंगे? कहिये, 'जो कुछ होता है होने दो, जैसा हो रहा है होने दो।'

मन में सोच लीजिये कि मेरा मंत्र 'ॐ नमः शिवाय' है। मैं अपने ढंग से आधे घंटे तक बैठकर इसका उच्चारण करता रहूँगा। मैं इसका उच्चारण गाकर कर सकता हूँ, बोलकर या मन में भी कर सकता हूँ। कुछ समय के लिये मैं 'ॐ नमः शिवाय' के प्रति सजग हूँ। 'ॐ नमः शिवाय' कहते-कहते यदि हठात् मेरा मन मंत्र से हटकर अपनी पारिवारिक समस्याओं, व्यावसायिक समस्याओं, संपत्ति, प्रेम, द्वेष और सफलता के बारे में सोचने लगता है तो भी ठीक है। आप 'ॐ नमः शिवाय', 'ॐ नमः शिवाय' जप करते रहिये, मन में जो कुछ चल रहा है, चलने दीजिये, किन्तु साथ ही मंत्र को भी जपते रहिए। केवल विभिन्न क्षेत्रों में अपने मन की सम्पूर्ण अभिव्यक्तियों का अनुसरण करते जाइये।

फिर एकाएक आप देखेंगे कि मन स्वयमेव ही 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र में रम गया है। मन इसमें पूर्णतया विलीन हो जायेगा और एकाग्रता के लिये कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ेगा। मन और ध्येय एक दूसरे के साथ अपने आप मिल जाते हैं।

मंत्र, यंत्र तथा मंडल के अभ्यास द्वारा चेतना जब अपने आपको साकार रूप में प्रकट करती है तब आप प्रत्यक्षतः वस्तुगत अनुभूतियाँ प्राप्त कर सकते हैं। इस समय अनेक व्यक्ति भयभीत हो जाते हैं। वे सोचते हैं, 'ओह! यह तो प्रेत है या कोई देव है या मेरी माँ मेरे पास पुनः आ गयी है।' जब पहली बार मैं मुंगेर में ठहरा था तो मुझे भी इस प्रकार के बहुत-से अनुभव हुए थे। उनमें से कुछ अनुभव डरावने थे, कुछ सुंदर थे, कुछ ऐसे थे जिनमें ऐसे व्यक्ति दिखलाई पड़े जिन्हें मैंने पहले कभी नहीं देखा था और कुछ पूर्व परिचित भी दिखाई पड़े। 14 जुलाई 1963 को मुझे मुंगेर में अपने गुरु स्वामी शिवानन्द जी का अन्तर्दर्शन हुआ। मैं जानता था कि मेरी अन्तर जागृति हो गई है तथा ठीक उसी क्षण उन्होंने ऋषिकेश में अपना शरीर छोड़ा।

इन अनुभवों को सभी साधक प्राप्त कर सकते हैं। इसमें डरने की कोई बात नहीं, आपको अपने भय को दूर करना होगा। यदि आप अपने भय को दूर नहीं करेंगे तो आप अपने अन्तर दृश्यों को स्पष्ट रूप से देख नहीं सकेंगे। भय दूर करने के लिये आपको यह जानने में सहायता मिलेगी कि जो कुछ हो रहा है वह सब चेतना की विकास प्रक्रिया का भाग है। ये अनुभव आपको भी सर्वथा उसी प्रकार हो सकते हैं जैसे इस मार्ग पर अग्रसर होने वाले अनेकों लोगों को हुए थे।

– 7 सितम्बर 1982, लॉस एन्जेलेस, कैलिफोर्निया

मंत्र जप और संस्कार

जब आप जप का अभ्यास करते हैं तो आपको स्मरण रखना चाहिये कि आप एकाग्रता का अभ्यास नहीं कर रहे हैं। मंत्र ध्वनियों का एक सम्मिश्रण है एवं ध्वनि एक शक्ति, एक ऊर्जा है। ध्वनि ऊर्जा मन की एकाग्रता तथा अवस्था के अनुसार परिवर्तित हो जाती है और यदि आप किसी प्रतीक पर या किसी विचार पर एकाग्रता का अभ्यास भी करते हों, यदि आपका मन अस्थिर और उद्विग्न हो तथा आप जप के समय सैकड़ों बातें सोचते हों तो भी कोई हर्ज नहीं है।

मंत्र संस्कृत का शब्द है जिसकी व्याख्या इस प्रकार की गई है – *मननात् त्रायते इति मंत्रः,* अर्थात् मंत्र जप करने से मन अपने बंधनों से मुक्त हो जाता है। जिस क्षण आप जप करना आरम्भ करते हैं उसी क्षण मन की गहराई में निहित वस्तुएँ मानसिक विरेचन के सदृश उभर कर ऊपर आ जाती हैं। कुछ मंत्र बहुत शक्तिशाली होते हैं, एक तीव्र जुलाब की तरह। इनका जप करने से अचेतन मन के विचार एकाएक निकल पड़ते हैं। आपके संस्कार मन की ऊपरी सतह पर आ जाते हैं और आप उन्हें संयत नहीं कर सकते। इसलिये आप जब मंत्रों का अभ्यास करते हैं तो सहज एवं स्वाभाविक रहें।

जब आप किसी मादक द्रव्य का सेवन करते हैं तब क्या आप एकाग्र होने का प्रयास करते हैं या एकाग्रता स्वयं आती है? आपको कुछ भी नहीं करना पड़ता। मंत्र का अभ्यास करने से भी यही होता है। मन की एकाग्रता स्वतः आती है और यदि एकाग्रता अपने आप नहीं आती है तो इसका मतलब है कि अभी बहुत चीजें आपके अन्दर से निकलनी शेष हैं। इसलिये अपने अन्तर की गहराई में निहित संस्कारों को निर्मूल कर देना है।

आप मंत्र का बैखरी जप कर सकते हैं, आप गाकर भी मंत्र का जप कर सकते हैं, लिखकर भी जप कर सकते हैं, इसका मानसिक रूप से चिन्तन भी कर सकते हैं, बुदबुदाकर भी जप कर सकते हैं, इसे श्वास के साथ जोड़ सकते हैं – नाभि से कण्ठ तक और कण्ठ से नाभि तक इसकी कल्पना कर सकते हैं, या आप इसका अभ्यास सुषुम्ना के अन्दर भी कर सकते हैं। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। किन्तु मंत्रोच्चार के समय हो रही शुद्धि की प्रक्रिया में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करें। आपके मानसिक स्तर पर जो कुछ भी उभर कर आता है, उसे स्वेच्छा से आने दें। ये चीजें अर्थहीन हैं, ये केवल आपके कर्म हैं।

मुझे द्वार पर रोक दिया गया था क्योंकि मैं समय से पूर्व पहुँच गया था। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे कोई संग्रहालय या पुस्तकालय दस बजे खुलता हो और आप वहाँ आठ बजे ही पहुँच गये हों। तब आपको दो घंटे प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। इसी प्रकार सम्पूर्ण कर्मों, इच्छाओं तथा उत्तेजनाओं का नाश किये बिना हम जीवन के इन आवश्यक एवं अनिवार्य अनुभवों को प्राप्त नहीं कर सकते। मैंने अमुक-अमुक पुस्तकों को पढ़ा, मैं बहुत ही क्रियाशील था, मैं कहता, 'अब मुझे मुक्त हो जाना चाहिये, मुझे इस जीवन में ही मुक्त हो जाना चाहिये। इसके लिये मैं कठोर साधना करूँगा, गहन ध्यान करूँगा' और केवल अपनी विशुद्ध संकल्पशक्ति के कारण मैं अपनी मंजिल के द्वार

पर पहुँच गया था, परन्तु द्वार बन्द था और यह बन्द द्वार केवल उसी के लिये खुलता है जो कर्मों से पूर्णतः मुक्त हो चुका हो।

अतएव प्रत्येक व्यक्ति के लिये यह आवश्यक है कि वह अपने मन के प्रत्येक अनुभव को यथातथ्य स्वीकार करे, चाहे वह कोई उद्देश्य हो, उत्तेजना, प्रेम, हिंसा, दान, शुद्धता, अश्लीलता या सुन्दरता का ही अनुभव हो, चाहे इनका सम्बन्ध आपके परिवार, मित्रों या किसी अन्य व्यक्ति से क्यों न हो। आपको प्रत्येक संस्कार को देखना है, प्रत्येक अव्यक्त संस्कार को जो आपके इस जीवन के लिये तथा भविष्य के लिये उत्तरदायी है। यह केवल एकाग्रता का अभ्यास नहीं, आँखों को बन्द कर लेने से ही इन संस्कारों का नाश नहीं होता। इस प्रकार की मान्यता पाश्चात्य देशों में है कि आँखें बन्द करो, अपने अन्दर प्रभामंडल और प्रकाश का अवलोकन करो – ऐसा कुछ भी नहीं होता। आप जब तक संस्कारों की गुत्थी को दूर नहीं कर देते तब तक आप कुछ भी देख सकने में असमर्थ ही रहेंगे।

– 12 सितम्बर 1982, सेन फ्रान्सिस्को, कैलिफोर्निया

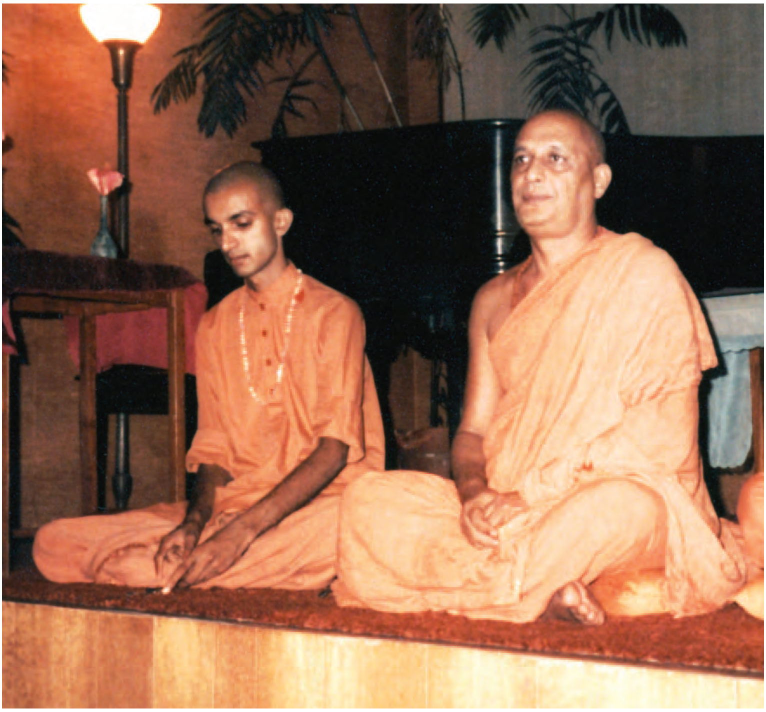

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

सत्यम् वाणी – कर्म योग

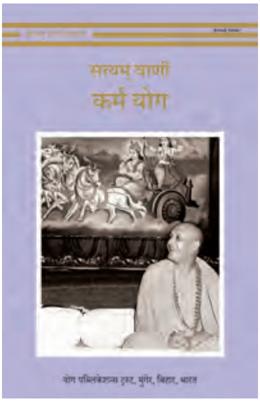

नया प्रकाशन

पृष्ठ 174, ISBN: 978-93-94604-04-9

जो मनुष्य संसार में रहकर सब कुछ करता है, किन्तु संसार से कोई आशा नहीं रखता, ऐसा व्यक्ति कर्मयोगी है।

इस पुस्तक में श्री स्वामी सत्यानन्द जी द्वारा सन् 1950 से 1980 के दशकों के बीच दिये गये कर्मयोग विषयक सत्संगों का संकलन है। श्री स्वामीजी की जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में पुस्तक रूप में प्रथम बार प्रकाशित ये सत्संग कर्मयोग के दार्शनिक और व्यावहारिक पक्षों को अत्यंत सरल, सुबोध ढंग से उजागर करते हुए, सभी साधकों को इस परम कल्याणकारी योग को आत्मसात् करने के लिए प्रेरित करते हैं।

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net
बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद
बिहार योग परम्परा की समस्त प्रकाशित कृतियाँ *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

यौगिक जीवनशैली साधना
biharyoga.net तथा *satyamyogaprasad.net* पर स्वस्थ जीवन हेतु यौगिक जीवनशैली साधना उपलब्ध है।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/
योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2020-23
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2023

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

जुलाई 2022–जुलाई 2024	आश्रम जीवन प्रशिक्षण
फरवरी 6–11	पूर्ण स्वास्थ्य कैप्सूल (हिन्दी)
मार्च 1–30	बिहार योग शिक्षक प्रशिक्षण
अप्रैल 4–10	प्रत्याहार एवं धारणा प्रशिक्षण
अप्रैल 18–24	प्राणायाम – स्वस्थ जीवन के लिए श्वसन प्रशिक्षण
जुलाई 1–दिसम्बर 31	योग चक्र अनुभव
सितम्बर 20–28	हठ योग एवं कर्म योग प्रशिक्षण
अक्टूबर 4–12	राज योग एवं भक्ति योग प्रशिक्षण
अक्टूबर 15–29	प्रगतिशील योग विद्या प्रशिक्षण
नवम्बर 20–29	क्रिया योग एवं ज्ञान योग प्रशिक्षण

बिहार योग भारती योगविद्या प्रशिक्षण

अप्रैल 15–जून 15	द्विमासिक यौगिक अध्ययन (अंग्रेजी)
अगस्त 7–अक्टूबर 7	द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी)

कार्यक्रम

जनवरी 24–26	बसंत पंचमी महोत्सव तथा बिहार योग विद्यालय का 60वाँ स्थापना दिवस
फरवरी 13-14	बाल योग दिवस
नवम्बर 4-15	मुंगेर योग संगोष्ठी 2

मासिक कार्यक्रम

प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	गुरु भक्ति योग
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ